ISSN – 2349-3100 Peer Reviewed

चतुर्थोऽङ्कः Refereed Journal

अन्ताराष्ट्रियमूल्यांकितत्रैमासिकसन्दर्भितशोधपत्रिका

# वेदज्योतिष्मती

Vedajyotishmati

**संरक्षकाः**

**प्रो. रामचन्द्रझाः, प्रो. रामदेवझाः,**

**प्रो. देवेन्द्रमिश्रः, प्रो. शिवाकान्तझाः**

**प्रधानसम्पादकः**

**प्रो. हंसधरझाः**

आचार्यः, ज्यौतिषविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,

भोपालपरिसरः।

**सम्पादकः**

**डॉ. आशीषकुमारचौधरी**

असिस्टेंट-प्रोफेसर, ज्यौतिषविभागः,

क.जे.सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्, मुम्बई।

**प्रकाशकः**

**संस्कृत-अनुसंधान-संस्थानम्, के. एम. टैंक लहेरियासरायः, दरभंगा**

# सम्पादकमण्डलम्


**1 प्रो .बोधकुमारझाः**
आचार्य, व्याकरण-विभाग,
क. जे. सोमैया-संस्कृतविद्यापीठ, मुम्बई ।

**2 प्रो. हंसधरझाः**
ज्योतिष विभाग ,आचार्य,
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान , भोपाल परिसर, भोपाल।

**3 प्रो. प्रमोदवर्धनकौण्डिल्यायनः**
विभागाध्यक्ष, मीमांसा दर्शन विभाग नेपाल,
नेपाल संस्कृत विश्वविद्यालय, काठमाण्डु, नेपाल ।

**4 जूही जेनोजे**
आचार्या,दर्शन विभाग,
कोरिया विश्वविद्यालय, सीओल, कोरिया ।

**5 डॉ. प्रवेशसक्सेना**
पूर्व आचार्या,संस्कृत विभाग,
जाँकिर हुसैन महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय।

**6 डॉ. धनञ्जयमणित्रिपाठी**
आचार्य ,संस्कृत विभाग,
मोदी विश्वविद्यालय, राजस्थान ।

**7 डॉ. दिलीपकुमारझाः**
विभागाध्यक्ष-धर्मशास्त्र विभाग
कामेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

**8 डॉ. राजीवमिश्रः**
प्राचार्य, सन्तनागपाल संस्कृतमहाविद्यालय,
एवं शोध संस्थान, सम्पूर्णानन्द संस्कृत
विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

**9 टेल्टो डेल्टेज**
आचार्य दर्शन एवं संस्कृति विभाग,
हेल्डमार्ग विश्वविद्यालय,हेल्डनवर्ग, जर्मनी।

**10 प्रो. विद्यानन्दझाः**
साहित्यविभागाध्यक्ष,
भोपाल परिसर, भोपाल।

**पुनर्वीक्षणमण्डलम्**

**1. आचार्य रामदेवझाः,**
पूर्व आचार्य ज्योतिष विभाग,
लालबहादुर शास्त्री, राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, दिल्ली ।

**2. आचार्य नीलाम्बर चौधरी,**
आचार्य रामभगत राजीवगाँधी महाविद्यालय दरभंगा ।

**3 आचार्या प्रवेश सक्सेना,**
आचार्या ,जाँकिर हुसैन महावि., दि. विश्व.,दिल्ली

**प्रबंधसंपादकः**

1. **श्री पंकजठाकुर**
2. **किरणमिश्रा** ल.ना. मि.वि दरभंगा।

**परामर्शदातृसंपादकः**

1. **डॉ. रंजय कुमार सिंह**
रा. सं. संस्थान, मुम्बई ।

**सहसंपादिका**

1 **डॉ गीता दूबे** , रा. सं. संस्थान, मुम्बई ।

**सम्पादकसहायकः**

1.**श्री सत्यनारायणः,** रा. सं. संस्थान, मुम्बई ।


@copy right – Rashtriya Sanskrit Anusandan Sansthan

Email – rsas.kothram@gmail.com, vjvv.rs@gmail.com,
Ph No. 06272-224671, 09619269812, 07506137027

पत्रिका में प्रकाशित लेखों से प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। विवाद का समाधान दरभंगा न्यायालय से ही स्वीकार्य है । लेखों को परिवर्तित, स्वीकृत एवं अस्वीकृत करने का पूरा अधिकार प्रकाशक को होगा ।A trilingual Educational Sanskrit Research Journal

Published by the Sanskrit Anusandhan Sansthan, Darbhanga

**From letter no-671/2014-15 Place on Rashtriya Sanskrit Anusandhan sansthan will kown as the Sanskrit Anusandhan Sansthan, Darbhanga**

# सम्पादकीयम्

प्राच्यज्ञानविज्ञानयोश्चिन्तनप्रवाहो नावरुद्ध्येत, वेदविद्याया अनुसन्धानात्मकं ज्ञानञ्च चिरं लोके प्रतिष्ठितं स्यादितिधिया प्रवर्तिताया लोकहितभावनाभरितायास्त्रैमासिक्या वेदज्योतिष्मतीपत्रिकायाश्चतुर्थोऽङ्कोऽचिरादेव विदुषाङ्करकमलेषु सादरं समर्प्यत इति महान् सन्तोषः। अङ्केऽस्मिन् संस्कृताङ्ग्लहिन्दीभाषोपनिवद्धा विविधशास्त्राणां प्रौढा निबन्धाः सन्ति विलसिताः । निबन्धा एते स्वस्वविषयान् ऋजुमार्गेण दृढबन्धेन सरलशब्दसुमनोगुम्फेन प्रस्तुवन्ति। नात्र सन्देहो यन्निबन्धैरेतैः शास्त्रीयविषयविस्तरो भवत्येव, प्रसारश्च संजायते संस्कृतविद्यायाः । अस्माद्धेतोर्हर्षनिर्भरेऽस्मिन् क्षणे संपुटितपाणियुगलोऽहं विदुषो लेखकान् सविनयं प्रणम्य अन्तर्मनसा तेषां प्रति कार्तज्ञं विनिवेदयामि । आशासे च यदेवमेव तेषां चतुरचमत्कारकारिचटुला लेखनी निर्बाधं शास्त्रानुसन्धाने संस्कृतविद्याप्रचारे च प्रवर्ततामिति ।

एवं शोधपत्रिकेयंत्रैमासिकीदेशदेशान्तरगतानांविविधविदुषां ज्ञानविज्ञानमयैश्शोधलेखैश्शोभमाना लोकमाह्लादयन्ती प्राकाश्यमेतीति मोदते मे मनः। आशासेऽङ्कोऽयञ्चतुर्थोऽपि पूर्ववदेव शोधच्छात्रोपकारी, पाठकानां स्वान्ताह्लादकारी च स्यात्।

पत्रिकाया अस्याः प्रकाशने मुख्यकारणभूतस्य राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थाने सोमैयापरिसरे अध्यापयतः प्रामुख्येण सम्पादनदायित्वं निर्वहतः परमजिज्ञासुयुवपण्डितस्य डॉ. आशीषकुमारचौधरीमहोदयस्य कृते हृदयेनाशेषं साशिषं धन्यवादं प्रयच्छामि। अस्मिन्नेव क्रमे साभिनन्दनं साधुवादं समर्पयामि तेषां समेषां विद्वन्निकराणां प्राध्यापकानां शोधच्छात्राणां कृतेऽपि येषां सार्थकश्रमोद्भूतैश्शोधपत्त्रैः पत्रिकेयं गौरवाय कल्पते। क्रमेऽस्मिन् ते सर्वेऽपि अक्षरसंयोजकादिसहयोगिनः पत्त्रिकाप्रकाशनाधिकारिणश्चाभिनन्दनीयाः साधुवादार्हाश्च येषाममूल्यं योगदानं वेदज्योतिष्मतीपत्त्रिकाप्रकाशनरूपज्ञानयज्ञे समधिगतम्।

अन्तेचकामयेभगवन्तंमहाकालंयदेवमेवज्ञानविज्ञानोद्भासकसारगर्भितविपश्चिल्लेखरञ्जिता पत्त्रिकेयं प्राकाश्यमधिगच्छन्ती अशेषकालं यावल्लोकानुरञ्जिनी स्यादिति ।

**वेदज्ज्योतिष्मतीत्यस्याः पत्त्रिकायाः सतां प्रियः ।**
**चतुर्थाङ्कोऽपि लोके स्याद्विद्वच्चित्तानुरञ्जकः।।**

गुणैकपक्षपातिनां सहृदयानां विदुषां शुभाशंसनमपेक्षमाणः-

**प्रधानसम्पादकः**

# विषयसूची


| | | पृष्ठसंख्या |
|---|---|---|
| सम्पादकीयम् | प्रो.हंसधरझाः | 3 |
| शास्त्रयोनित्वात् ( ब्रह्मसूत्र – 1-1-3) | प्रो .बोधकुमारझाः | 5 |
| भरतनाट्यशास्त्रे नाट्यगृहशिल्पविधानम् | प्रो. हंसधरझाः | 6 |
| कुहनाभैक्षवप्रहसनस्येतिवृत्तसमीक्षणम् | डा.नारायणन्.ई.आर् | 9 |
| प्राकृतिक आपदाओं का ज्योतिषशास्त्र द्वारा पूर्वानुमान | डॉ. राजीव रंजन | 12 |
| वेदकालीन पत्नी का भारतीय संस्कृति में योगदान | डा. अपर्णा धीर | 15 |
| सोमनाथ मन्दिर का भौगोलिक एवं ऐतिहासिक स्वरूप | डा.आशीष कुमार चौधरी | 19 |
| वैदिकदेवः श्रीजगन्नाथः | सपन कुमार पण्डा | 23 |
| अष्टकूट विचार कैसे प्रकार करें | किरण मिश्रा | 26 |
| समकालीन कविता में स्त्री चिन्तन | डा. गीता दुबे | 28 |
| **The Ideals in Vedic Education** | **Dr. Prem Singh Sikarwar** | 32 |
| ENGLISH – A GLOBAL LANGUAGE IN A MULTILINGUAL COUNTRY | Dr. Leena Tiwari | 35 |
| **ROLE OF YOGA EXERCISE IN PHYSICAL FITNESS** | **Shankar Baburao Aandhale** | 37 |

# *दार्शनिक स्तम्भ*

## शास्त्रयोनित्वात् ( ब्रह्मसूत्र – 1-1-3 )

✍प्रो .बोधकुमार झा

[ शब्दार्थ – शास्त्र = ऋग्वेद आदि के, योनित्वात् = कारण होने से , ब्रह्म सर्वज्ञ है। ]

पूर्वसूत्र में जगत् का कारण ब्रह्म को बताया गया है। वह ब्रह्म सर्वज्ञ है। कोई भी ज्ञान ऐसा नहीं , जो कि ब्रह्म में नहीं हो। जगत् में विद्यमान कीट – पतङ्ग से लेकर पर्वत , समुद्र , पृथ्वी , जल , तेज , वायु , आकाश और बुद्धिजीवी मानव तक के रचनाकार ब्रह्म हैं। कोई किसी चीज को बनाता तभी है , जब वो पूर्णतः उसे जानता है। ब्रह्म ने भी सर्व ( सभी ) को बनाया है , तो वह सर्वज्ञ अवश्य है। इस प्रकार ब्रह्म का पूर्वसूत्र से जगत् कर्त्ता होना तो सिद्ध होता ही है , साथ – साथ उसकी सर्वज्ञता भी सिद्ध होती है। इस सूत्र में सर्वज्ञता सिद्ध करने के लिए दूसरा तर्क भी व्यास देते हैं – शास्त्रयोनित्वात्। अर्थात् ब्रह्म शास्त्रों के योनि ( कारण ) है , अतः वह सर्वज्ञ है। शास्त्र किसे कहते हैं ? शास्त्र वह है जो सभी वर्णों का , सभी आश्रमों का गर्भ से लेकर श्मशान तक ब्राह्ममुहूर्त्त से लेकर रात तक , नित्य , नैमित्तिक और काम्य इन तीन प्रकार के कर्मों के लिए और ब्रह्मज्ञान के लिए शासन करता है। ऐसा शास्त्र ऋग्वेद आदि वेद हैं। यह वेद इतना महत्वपूर्ण है कि दश विद्याओं के द्वारा व्याख्यायित होता है। दश विद्यायें हैं – पुराण , न्याय , मीमांसा , धर्मशास्त्र , शिक्षा , कल्प , व्याकरण , निरुक्त , छन्दस् और ज्योतिष। वेद प्रदीपवत् हैं। जैसे प्रदीप अंधेरे में सभी वस्तुओं का ज्ञान कराता है , वैसे ही वेद असन्दिग्धरूप से सभी का प्रकाशक है। इस तरह वेद सर्वज्ञ सदृश है,और इस सर्वज्ञ सदृश वेद का कारण होने के कारण ब्रह्म सर्वज्ञ हैं , यह सिद्ध होता है। लोक में देखा गया है कि जो ग्रन्थकार ग्रन्थ बनाता है , वह ग्रन्थकार उस ग्रन्थ में प्रतिपादित ज्ञान से अधिक ज्ञानवान् होता है। जैसे पुस्तक में कोई लेखक लिखता है कि गन्ना , खीर , गुड, लड्डू ये सब मीठे हैं। पर इन सब के मीठेपन में क्या फर्क है , इस बात को लेखक जानता तो है , पर उसका विवरण पुस्तक में नहीं दे पाता। वेद यद्यपि ज्ञान की खान है। ऋग्वेद की इक्कीस , यजुर्वेद की एक सौ एक , सामवेद की एक हजार एवम् अथर्ववेद की नौ शाखाएँ हैं। इनमें देवता , पशु – पक्षी आदि सभी योनियों के स्वरूप एवं कर्त्तव्य , अकर्त्तव्य का विधान है। फिर भी निःश्वास की तरह बिना परिश्रम का ब्रह्म से यह सम्भव होता है। बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है – अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्यदृग्वेदः। अर्थात् वेद ब्रह्म का निःश्वास है। जैसे साँस बिना प्रयास किये निकलती है, उसी तरह वेद भी ब्रह्म से निकलता है। यह वेद प्रत्येक सृष्टि में यथावत् ब्रह्म के निःश्वास से प्रादुर्भाव होता है।इसमें कोई अन्तर नहीं होता। जैसे किसी भी नई सृष्टि में अग्नि किसी को शीतल नहीं करती है। जल किसी को जलाता नहीं है। क्योंकि उसका वह स्वभाव है। उसी तरह वेद भी हर युग में एक जैसा ही होता है। इसलिए वेद को अपौरुषेय कहा जाता है। अपौरुषेय अर्थात् वेद की बनावट में तनिक भी बदलाव करने के लिए पुरुष ( ईश्वर ) स्वतन्त्र नहीं होता है। उक्त सूत्र में वेद को शास्त्र शब्द से और कारण योनि शब्द से कहा गया है। सभी ज्ञानों से पूर्ण वेद के कारण होने से ब्रह्म में सर्वज्ञता तथा बिना परिश्रम के वेद जैसी ज्ञानराशि को निःश्वास के रूप में निकालने से ब्रह्म में सर्वशक्तिसम्पन्नता प्रमाणित होती है।

**शब्द - अभिव्यक्ति की सीमा होती है, किन्तु ज्ञान असीम है ।**

**आचार्य, व्याकरण-विभाग, क. जे. सोमैया-संस्कृतविद्यापीठ, मुम्बई।**

# भरतनाट्यशास्त्रे नाट्यगृहशिल्पविधानम्

✍प्रो. हंसधरझाः

"इहादिर्नाट्ययोगस्य नाट्यमण्डप उच्यते"। श्लोकार्धेऽस्मिन् नाट्यप्रसङ्गे नाट्यगृहस्य प्राथम्यं प्रतिपादितम् भरतमुनिना। नाट्यशास्त्रे हि द्वितीयाध्याये विशेषेण नाट्यगृहविषयकं विवेचनं कृतं भरतेन। तत्र मुख्यरूपेण विकृष्टं चतुरस्रं त्र्यस्रं चेति त्रिविधं नाट्यगृहं प्रतिपादिम्। यथा-

**त्रिविधः सन्निवेशश्च शास्त्रतः परिकल्पितः । विकृष्टश्चतुरस्रश्च त्र्यस्रश्चैव तु मण्डपः।।**

तत्प्रत्येकमपि ज्येष्ठमध्यमकनिष्ठभेदैस्त्रिविधम्। यथा-

**तेषां त्रीणि प्रमाणानि ज्येष्ठं मध्यं तथाऽवरम् । प्रमाणमेषां निर्दिष्टं हस्तदण्डसमाश्रयम्।।**

एवं नवविधेषु नाट्यगृहेषु विकृष्ट- चतुरस्र-त्र्यस्र-नाट्यगृहाणामेकैकस्य प्रकारस्य वर्णनमुपलभ्यते नाट्यशास्त्रे। तत्र विकृष्टनाट्यगृहं वर्णयता भरतेन लिखितं यदस्य पूर्वापरं दैर्ध्यं चतुःषष्टिहस्तमितं, दक्षिणोत्तरा च विस्तृतिर्द्वात्रिंशद्धस्तमिता भवेत्। तद् यथा-

**चतुःषष्टिकरान्कुर्याद् दीर्घत्वेन तु मण्डपम् । द्वात्रिंशतं च विस्तारान् मर्त्यानां यो भवेदिह।।**

एवमुपर्युक्तदैर्ध्यविस्तारपरिमितभूमौ सर्वप्रथमं शास्त्रोक्तविधानेन खातं कृत्वा ततः शिलान्यासं भित्तिं च विधाय स्तम्भस्थापनं कुर्यादित्युक्तम्। यथा-

**भित्तिकर्माणि निर्वृत्ते स्तम्भानां स्थापनं ततः।**

एवं नाट्यगृहभूमेराग्नेय्यादिषु चतुर्षु कोणेषु चत्वारो दृढाः स्तम्भा ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्रसंज्ञकाः स्थापयितुं निर्दिष्टाः। तेषु च स्तम्भेषु क्रमशः श्वेत-रक्त-पीत-नीलपदार्थानामुपयोगो भवतिस्म यथा-

**प्रथमे ब्राह्मणस्तम्भे सर्पिः सर्षपसंस्कृते।सर्वशुक्लो विधिः कार्यो दद्यात्पायसमेव च।।**
**ततश्च क्षत्रियस्तम्भे वस्त्रमाल्यानुलेपनम् । सर्वं रक्तं प्रदातव्यं द्विजेभ्यश्च गुडौदनम्।।**
**वैश्यस्तम्भे विधिः कार्यो दिग्भागे पश्चिमोत्तरे। सर्वं पीतं प्रदातव्यं द्विजेभ्यश्च घृतौदनम्।।**
**शूद्रस्तम्भे विधिः कार्यः सम्यक् पूर्वोत्तराश्रये।नीलप्रायं प्रयत्नेन कृशरा च द्विजाशनम्।।**

**अपि च –**

**पूर्वोक्तब्राह्मणस्तम्भे शुक्लमाल्यानुलेपने। निक्षिपेत्कनकं मूले कर्णाभरणसंश्रयम्।।**
**ताम्रं चाधः प्रदातव्यं स्तम्भे क्षत्रियसंज्ञके। वैश्यस्तम्भस्य मूले तु रजतं सम्प्रदापयेत्।।**
**शूद्रस्तम्भस्य मूले तु दद्यादायसमेव च। शेषेष्वपि च निक्षेप्यं स्तम्भमूले तु काञ्चनम्।।**

अत्र ध्यातव्यमिदमस्ति यन्नाट्यगृहनिर्माणेक्रमे आचार्यभरतेन तत्सर्वमपि नियमपालनं निर्दिष्टं यत् खलु वास्तुरचनाक्रमे ज्यौतिषशास्त्रीयं विधनमपेक्षितं भवति।

एवं विहितसूत्रेण विहितमुहूर्तेषु खातखननं शिलान्यासं मित्तिनिर्माणञ्च विधाय पूर्वोक्तस्य समग्रस्य क्षेत्रस्य पूर्वापरं भागद्वयं विधेयम्। तत्र यः पूर्वार्धभागः स प्रेक्षाकाणामुपवेशनाय प्रेक्षागृहत्वेन व्यवस्थापितः। अपरार्धभागश्च योऽवशिष्टस्तस्य पुनः पूर्वापरं भागद्वयं विधाय तत्र पश्चिमार्धे नेपथ्यगृहं निर्धारितम्। भागस्यास्योपयोगः पात्राणां कृते वेशभूषोपयोगार्थं भवति स्म। अथ च नेपथ्यञ्च प्रेक्षागृहञ्चान्तरा योऽवशिष्टो भागस्तस्यापि पूर्वापरौ समौ विभागौ विधाय, तत्र प्रेक्षागृहसंलग्नभागस्योभयपार्श्वतः अष्टहस्तात्मकौ चतुस्रभागौ विहाय मध्ये योऽवशिष्टः षोडशाष्टहस्तपरिमितदैर्ध्य-विस्तारविशिष्ट आयताकारको भागः स रङ्गपीठत्वेन निर्दिष्टः। अथ च नेपथ्यभागसंलग्नमवशिष्टं भागं त्रिधा विभज्य मध्यभागेऽष्टहस्तात्मके चतुरस्त्रे रङ्गशीर्षस्य कल्पनास्ति। रङ्गशीर्षं रङ्गपीठञ्चोभेऽपि नटवर्गाय नाट्यप्रयोगप्रदर्शनार्थं व्यवस्थापिते आस्ताम्। यथा-

**चतुःषष्टिकरान कृत्वा द्विधा कुर्यात्पुनश्च तान्। पृष्ठतो यो भवेद् भागो द्विधाभूतस्य तस्य तु ।।**
**सममर्धविभागेन रङ्गशीर्षं प्रकल्पयेत्। पश्चिमे च विभागेऽथ नेपथ्यगृहमादिशेत्।।**
**विभज्य भागान् विधिवद् यथावदनुपूर्वशः।। इति**

रङ्गपीठस्योभयतो यौ चतुरस्रौ तयोश्चतुर्षु कोणेषु चत्वारश्चत्वारः स्तम्भा निर्मीयन्ते स्म। यथा "चतुःस्तम्भासमायुक्ता वेदिकायास्तु पार्श्वतः"। स्तम्भा एते विशेषेणोन्नता भवन्ति स्म। एतेषामुपरि गजपरिष्टोम (हौदा) इव सूच्याग्रस्तम्भा भवन्ति स्म। भागद्वयमिदं मत्तवारिणीपदेनाख्यातम्। यथा-

**रङ्गशीर्षस्य पार्श्वे तु कर्तव्या मत्तवारणी। चतुःस्तम्भसमायुक्ता रङ्गपीठप्रमाणतः।।**

अनयोरुपयोगः कक्ष्यारूपेण भवति स्म। मत्तवारिण्योराधारभूमी रङ्गपीठश्चेत्युभेऽपि सम्मुखस्थप्रेक्षागृहभूमितः सार्थकहस्तमिते उन्नते भवेतामित्युक्तं नाट्यशास्त्रे। यथा-

**अध्यर्धहस्तोत्सेधेन कर्तव्या मत्तवारिणी। उत्सेधेन तयोस्तुल्यं कर्तव्यं रङ्गमण्डपम्।।**

अथ च नेपथ्यभूमिं रङ्गपीठं चान्तरा रङ्गशीर्षाख्यको भागो भवित स्म, यत्र हि षड्दारुमयाः स्तम्भा भवन्ति स्म। एतत्स्तम्भविषये विवेचयताऽभिनवगुप्तेन लिखितं यत्- "नेपथ्यभित्तिलग्नौ स्तम्भौ अष्टहस्तान्तरावन्योन्यं निवेश्य तयोस्सम्मुखं तदपेक्षया चतुर्हस्तान्तरं स्तम्भद्वयं तेषामधस्तनं कार्यं स्तम्भद्वयमिति षट"।अर्थाद्रङ्गशीर्षस्य चतुर्षु कोणेषु चत्वारः स्तम्भा भवन्ति स्म। तथा तत्रोभयपक्षयोः स्थितयोर्द्वयोरपि स्तम्भयोः साक्षान्मध्यभागयोरेकैकः स्तम्भो भवति स्म। मन्ये एतन्निर्दिष्टयोः स्तम्भयोस्तथा नेपथ्यसंलग्नयोः स्तम्भयोः सहाय्येन मृच्छकटिकवर्णितोद्दामच्छदिः, अथवा रत्नावल्यां निर्दिष्टप्रासाद इत्यादिकस्य प्रदर्शनं क्रियते स्म। अथवा भागाविमौ पीठस्य साक्षात्पृष्ठस्थित्वात् प्रसङ्गवशादत्रैव तिरस्करणीं प्रयुज्यैककालावच्छेदन भिन्नो भिन्नो द्वौ प्रसङ्गौ प्रदर्श्येते स्म। यथा भवभूतेरुत्तररामचरिते एकस्मिन्नेव काले रामवासन्त्योस्तथा सीतातमसयोः पृथक-पृथक पारस्परिकवार्तालापयोः प्रसङ्गौ स्तः। मन्ये, एवम्भूतयोः प्रदर्शनमत्रोभयोर्भागयोरेकस्मिन्नेव काले क्रियते स्म, येन तौ द्वापि युग्मौ परस्परदृष्टौ न स्याताम्, परं प्रेक्षकाणां दृष्टगौ भवेतामिति। अथ चात्र रङ्गशीर्षस्य भूमिरन्यभागापेक्षया किञ्चिदुन्नता भवति स्म।

**स्मुन्नतं समञ्चैव रङ्गशीर्षं तु कारयेत्। विकृष्टेरून्नतं कार्यं चतुस्रां समं तथा।।**

एवम्मध्यमनाट्यगृहेऽत्र द्वाराणि पञ्च भवन्ति स्म, यत्रैकं प्रेक्षकाणां प्रवेशायापराणि च नाट्यपात्राणां प्रवेशाय भवन्ति स्म। एवमत्र भरतमुनिप्रतिपादितं मध्यमविकृष्टनाट्यगृहं समासेन प्रतिपादितम्। तत्र ज्येष्ठविकृष्टनाट्यगृहस्य दैर्ध्यं ह्यष्टोत्तरशतमितं तथा कनिष्ठविकृष्टनाट्यगृहस्य द्वात्रिंशद्धस्तमितं कथितम्। तद् यथा

**अष्टाधिकं शतं ज्येष्ठं चतुःषष्टिस्तु मध्यमम्।कनीयस्तु तथा वेश्म हस्ता द्वात्रिंशदिष्यते।।**

मण्डपस्य विशालाधिक्ये सति प्रेक्षका बहुविधदृष्टिभेदान् प्रयान्ति, नैव च पाठमेव सम्यक्तया श्रोष्यन्तीति धियाऽचार्येण भरतमुनिना मध्यमप्रकारस्य नाट्यगृहस्य प्राधान्यं प्रतिपादितम्। यथा-

**प्रेक्षागृहाणां सर्वेषां तस्मान् मध्यममिष्यते। यावत्पाठ्यं च गेयं च तत्र श्रव्यतरं भवेत्।।**

अथ च विकृष्टस्येव चतुरस्रस्यापि नाट्यगृहस्याष्टोत्तरशतादिहस्तभेदेन त्रिविधत्वं प्रतिपादितं भारते नाट्यशास्त्रे। तत्र त्रयाणां प्रकाराणां मध्ये द्वात्रिंशद्धस्तात्मकस्य समचतुरस्रस्य कनिष्ठाख्यस्य नाट्यगृहस्य वर्णनं प्राप्यते। यथा-

**अष्टहस्तं तु कर्तव्यं रङ्गपीठं प्रमाणतः। चतुरस्रं समतलं वेदिकासमलङ्कृतम्।।**

एवं नाट्यगृहस्यास्य वर्णनक्रमे भरतस्याभिप्रायं स्पष्टीकुर्वद्भिर्विविधटीकाकारैर्वैविध्यं प्रतिपादितम्। तत्राभिनवगुप्तेनोल्लिखितं वार्तिककारश्रीशङ्कुकमतमत्र विविच्यते। श्रीशंङ्कुकः कथयति- "अष्टाभिर्भागैः सर्वतःक्षेत्रं विभज्यते येन चतुरङ्गफलकवत् चतुःषष्टिकोष्ठं भवति। तत्र मध्यमकोष्ठचतुष्के रङ्गपीठं सर्वतोऽष्टहस्तम्। तस्य पश्चिमे भागे प्राक्पश्चिममेव द्वादशहस्तं दक्षिणोत्तरे द्वात्रिंशतत्करं क्षेत्रमवशिष्यते। यद् रङ्गपीठत्वेन स्वीकृतं तद् द्विहस्ताष्टकमेव। यदवशिष्टं क्षेत्रं तन्मध्याद्रङ्गपीठनिकटगतं प्राक्पश्चिमतश्चतुर्हस्तं, विस्तारेण द्वात्रिंशद्धस्तं क्षेत्रम्। तस्माद् विभज्यते तावत्प्रमाणम्। एवं पश्चिमभागेऽपि विभज्य रङ्गशीर्षकसंस्थानं रङ्गशिरः कुर्यात्। ततोऽपि पश्चिमे नेपथ्यगृहम्" इति।एवं निर्धारिते पीठादिके रङ्गपीठस्य चतसृषु दिक्षु दशानां स्तम्भानां स्थापनं कर्तव्यमिति भरतस्याभिप्रायं स्पष्टीकुर्वता श्रीशङ्कुकेन लिखितं यत्- "कोणचतुष्टये तावच्चत्वारः। तत्राग्नेयस्तम्भाच्चतुर्हस्तान्तरो दक्षिणः स्तम्भः। तथैव नैऋतस्तम्भाद्वितीयः। एवमुदीच्यामपि स्तम्भद्वयम्। पूर्वभागे आग्नेयेशानदिग्गतात् स्तम्भद्वयाच्चतुर्हस्तान्तरं स्तम्भद्वयमिति षट्। कोणगाश्चत्वार इति दश। एतद् बहिः सामाजिकानामासनानि" इति। एवं स्थापितेषु दशसु स्तम्भेषु पुनश्चतुर्दशानां स्तम्भानां स्थापनभीष्टं भरतस्य। तत्र प्रथमं षण्णां स्तम्भानां स्थापनं श्रीशङ्कुकेन निम्नप्रकारेण स्पष्टीकृतम्। यथा- "रङ्गपीठस्य दक्षिणतो निवेशितस्तम्भद्वयाच्चतुर्हस्तान्तरावन्योन्यमष्टहस्तान्तरौ द्वौ। तत आग्नेयस्तम्भसम्मुखो योऽन्यस्तु पूर्वस्तम्भः ततश्चतुर्हस्तान्तरं दक्षिणं स्तम्भं कुर्यादेवमुत्तरत्रापि" इति।पुनश्चावशिष्टानामष्टानां स्तम्भानां स्थापनक्रमं व्यनक्ति श्रीशङ्कुकः- "दक्षिणभित्तेरुदग्भागे चतुर्हस्तान्तरं पूर्वस्थापितस्तम्भाद् भित्तेश्चैकं स्तम्भं दद्यात् पूर्वम्। एवम् उत्तरभित्तेः दक्षिणदिग्भागे। ततः पूर्वभित्तेश्चतुर्हस्तान्तरौ रङ्गभागद्वयानुसारेण। ततोऽपि चतुर्हस्तान्तरौ द्वौ" इति। एवमाहत्य नाट्यगृहेऽत्र प्रयुज्यमानाः स्तम्भाश्चुर्विंशतिः। तत्र प्रतीयते यत् प्रेक्षकासनोपयुक्तानां चतुर्दशानां स्तम्भानामुन्नतत्वं सोपानमिव रङ्गपीठाच्चतुर्हस्तमिताद्दूरतो भित्तिं प्रति वर्धते क्रमश इति। मण्डपेऽत्रापि विकृष्टमण्डप इव पञ्चद्वाराणि भवन्तीति बहूनामभिप्रायः। परमत्राभिनवगुप्तानुसारं नेपथ्याद्रङ्गपीठं प्रवेष्टुं प्रेक्षकद्वारसम्मुखं षष्ठमपि द्वारं, येन सूत्रधारो नटी च

प्रविशतः स्म। अथ च तृतीयं खलु भरतकथितं नाट्यगृहं त्र्यास्राख्यं यद्धि विकृष्टमिव ज्येष्ठमध्यमकनिष्ठभेदेन त्रिधा। परमत्रापि भरतो दैर्ध्यादिकमनुक्त्वैव त्र्यस्राख्यं नाट्यगृहं वर्णितवानस्ति। तद् यथा-

**त्र्यस्रं त्रिकोणं कर्तव्यं नाट्यवेश्मप्रयोक्तृभिः। मध्ये त्रिकोणमेवास्य रङ्गपीठं तु कारयेत्।।**

श्लोकस्यास्य भावं स्पष्टयताऽभिनवगुप्तेन लिखितं यत् - "विकृष्टचतुरस्रमानद्वयमेव भवति। मध्ये च त्रिकोणमेव रङ्गपीठम्। तथैव रङ्गशिरः। नेपथ्यगृहञ्च"। अर्थात् त्र्यस्रमिदं नाट्यगृहं त्रिभुजाकारकं भवति। तत्र मध्ये रङ्गशीर्षं रङ्गपीठं नेपथ्यगृहं च त्रिकोणात्मकानि तथा प्रेक्षागृहं चतुर्भुजाकारकं भवतीति भावः। एवमत्र त्र्यस्रनाट्यगृहवर्णनक्रमे पुनरावृत्तिर्न स्यादिति धिया वक्ति मुनिर्भरतः- **विधिर्यश्चतुरस्रस्य भित्तिस्तम्भसमाश्रयः। स तु सर्वः प्रयोक्तव्यस्त्र्यस्रस्यापि प्रयोक्तृभिः।।**

तात्पर्यमिदं यच्चतुरस्रेऽपि सर्वोऽपि विधिरनुष्ठेयः। अर्थाच्चतुरस्रनाट्यमण्डपस्य कृते यद् भित्तिविषये स्तम्भविषये वा विधानं विहितं तदेवात्रापि त्रयस्रनाट्यमण्डपेऽवगन्तव्यमिति भावः। वस्तुतो भारतेऽस्मिन्नाट्यशास्त्रे प्रेक्षागृहविषयकं विशदं खलु राजते विवेचनम्। तत्र निर्माणक्रमे भित्तिस्थापनं स्तम्भस्थापनमित्यादिकं सर्वमपि शास्त्रोक्तपूजनादिविधानेनैव कार्यमित्याह। यथा- **श्रूयतां तद् यथा यत्र कर्तव्यो नाट्यमण्डपः। तस्य वास्तु च पूजा च यथा योज्या प्रयत्नतः।।**

पुनश्च- **सर्वलक्षणसम्पन्ने कृते नाट्यगृहे शुभे। गावो वसेयुः सप्ताहं सह जप्यपरैर्द्विजैः।।**

**ततोऽधिवासयेद् वेश्म रङ्गपीठं तथैव च। मन्त्रपूतेन तोयेन प्रोक्षिताङ्गो निशागमे।।इत्यादि।**

अत्र हि नाट्यगृहादिषु विविधानि मनोहराणि चित्राणि लेख्यानि, विविधाश्चानुलेपाः प्रयोक्तव्या इत्यादिकं बहुविलक्षणतया विवेचितं, परमत्र निबन्धे विस्तारभिया नोल्लिखितम्।

**सन्दर्भग्रन्थसूची**

[1] भरतनाट्यशास्त्रम् ,अ. 02,श्लो 3
[2] भरतनाट्यशास्त्रम्,अ. 02, श्लो 8
[3] भरतनाट्यशास्त्रम् ,अ. 02 ,श्लो 9
[4] भरतनाट्यशास्त्रम् ,अ. 02, श्लो 20
[5] भरतनाट्यशास्त्रम् ,अ. 02,श्लो 50
[6]भरतनाट्यशास्त्रम् ,अ. 02, श्लो 53-59
[7] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो. 40-42
[8] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो. 105
[9] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो. 70
[10] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो 71
[11] भरतनाट्यशास्त्रम् का विवेचन पृ. 39
[12]भरतनाट्यशास्त्रम् का विवेचन पृ. 41
[13]भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो 10
[14] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो 24
[15]भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो 104
[16]भरतनाट्यशास्त्रम् (गो.वा.के) पृ. 42
[17] भरतनाट्यशास्त्रम् (गो.वा.के) पृ. 43
[18]भरतनाट्यशास्त्रम् (गो.वा.के) पृ. 43
[19] भरतनाट्यशास्त्रम् (गो.वा.के) पृ. 44
[20]भरतनाट्यशास्त्रम् (गो.वा.के) पृ. 45
[21]भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो 108
[22] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो 110
[23] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 2 श्लो 6
[24] भरतनाट्यशास्त्रम् अ. 3 श्लो 1-2

**आचार्यः, ज्योतिषविभागः**
**राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, भोपालपरिसरः**

# कुहनाभैक्षवप्रहसनस्येतिवृत्तसमीक्षणम्

✍डा. नारायणन्. ई. आर्.

## मङ्गलाचरणम्

**दक्षाधःकरपङ्कजे रवमयीं वीणां वहन्तीं सदा**
**दक्षोर्ध्वे जपमालिकां मणिगणैराभूषिताङ्गां वराम्।**
**वामाधःकरसम्भृताखिलपराविद्यासुपुस्तान्वितां**
**सुस्मेरस्फुटिताधरां सुनयनां वाचामधीशां भजे।।**

### उपोद्घातः

कुहनाभैक्षवाख्यं किञ्चित् प्रहसनं बोम्मगण्टिगङ्गाधरसुततिरुमलनाथकृतिष्वन्यतमं अर्थलिप्सया धर्मश्रवणादि-विमुखानां भिक्षूणां परिहासार्थं रूपकविषयीकृतं तावदत्र निरीक्षामहे। प्रस्थानेऽस्मिन् विद्धशालभञ्जिकामत्तविलासादीनि सहृदयैः परिशीलितपूर्वाण्यपि तु राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थाने सहृदयान्तराणामलङ्कारशास्त्रशुश्रूषुतयाऽध्येतॄणां विशिष्य साहित्यविभागे समधीयानानामस्मच्छिष्याणामामोदार्थं संकलितमिदं निरीक्षणं मन्ये समेषां सरस्वतीकटाक्षपात्राय प्रकल्पतइति। प्रहसनेऽस्मिंस्तावल्लक्ष्ये नाट्यशास्त्रदशरूपकसाहित्यदर्पणादितल्लक्षणग्रन्थस्वारस्येन निरीक्षणमुपकल्पयामः। तदुपक्रमे कुहनाभैक्षवपदनिष्पत्तिः, रूपकपात्रपरिचयः, कुहनाभैक्षवस्येतिवृत्तम्, रूपकपात्रवैशिष्ट्यम्, प्रहसनलक्षणम्, लक्षणस्य लक्ष्यसमन्वयः, रूपकन्तरसंवादश्चेति नैकानत्र विषयान् संक्षिपामः।

### कुहनाभैक्षवपदस्य निष्पत्तिः।

कुह विस्मायने, चुरादिरात्मनेभाषः, सकर्मकः, सेट्। कुहयते विस्मापयति। विस्मायनमन्यतो विस्मयोत्पादनम्। कुह इत्यतो ण्यासश्रन्थो युच् (३. ३. १०७) इति युचि कुहना। दम्भचर्या इति मेदिनी। लोभान्मिथ्येर्यापथकल्पना इत्यमरः। अर्थलिप्सया मिथ्याचारभेदस्य सम्पादना। दम्भमात्रकृतध्यानमौनादिः। अर्थलिप्सया धर्माश्रवणमिति भरतः। भिक्षूणां समूहो भैक्षवः। ओरञ्। अणोऽपवादः। कुहनया दम्भचर्यया लोभान्मिथ्येर्यापथकल्पनया वा, अर्थलिप्सया, मिथ्याचारभेदस्य सम्पादनया दम्भमात्रकृतध्यानमौनादिना वा, अर्थलिप्सया धर्माश्रवणेन युक्ता ये भिक्षवस्तेषां समूहो कुहनाभैक्षवः।

### कुहनाभैक्षवस्येतिवृत्तम्।

गोपिकारमणाख्यो विटः कश्चिद् भिक्षुश्चन्द्ररेखाख्यायामतिरक्त उन्मत्तः। चन्द्ररेखापि अहम्मदखानाख्यस्य यूनः कस्यचित्तुरुष्कस्य महाराजच्छत्रधारिणो गणिका। गोपिकारमणस्य शिष्यो दामोदरस्तत्कथामुपस्थापयति। गणिकान्तरं शङ्करकौशिकी नाम्नी दामोदरमुन्मत्तस्य भिक्षुगुरोरस्योन्मत्ततां विवृणोति। दामोदरः शङ्करकौशिक्याः सर्वं गुरोर्दुर्वृत्तं शृणोति। अथ भिक्षुगोपालसंवादस्तत्र गोविन्दोऽपि भिक्षोश्शिष्यः। चन्द्ररेखा अहम्मदखानस्यान्तःपुरे वर्ततइति भिक्षोः खेदः। सगोविन्दो भिक्षुर्देवोद्यानं प्रविशति कृष्णनमस्कारपुष्पसञ्चयनादिमिषेण। तत्र स चन्दरेखया सह रमते। कस्यचित्तुरुष्कस्योद्यानप्रवेशाद् भिक्षो रमणं विघ्नितम्। भिक्षवे जातकोपा शङ्करकौशिकी हम्मीरखानवेषधारिणी गृहीतखड्गा भिक्षुं भाययति। अथ गोविन्ददामोदरसंवादस्तत्राहम्मदखानदस्तुरखानयोर्मिथ चन्द्ररेखानिमित्तं वैरं प्रवृत्तमिति सूच्यते। कौमुदिकाच्छन्नवेषेण भिक्षुरहम्मदखानसभाप्रवेशो दामोदरेण निर्दिष्टः, दामोदरश्च चेटीवेषधारी। अहम्मदखानसभायां हास्यपूर्णो रङ्गः प्रचलति। पुनरपि भिक्षुचन्द्ररेखयोर्मेलनं हास्यपरम्। तत्र दामोदरगेविन्दयोरपि सरसभाषणं तदेव परिपोषयति। दामोदरो वदति भिक्षुं प्रतिभगवन्, किं ते भूयः प्रियमुपहरामि? भिक्षुराह-किमतः परं प्रियमस्ति, **अतिसन्धाय तरसा तुरुष्कसरघव्रजम्। सच्छिष्येण त्वया यस्मान्मधुधारा ममार्पिता।।** (कु. भै. ६१) इति। अथ भरतवाक्येन प्रहसनसमाप्तिः।

### कुहनाभैक्षवपात्रवैशिष्ट्यम्।

अत्र प्रहसने भिक्षुः, दामोदरः, गेविन्दः, चन्द्ररेखा च स्वस्वपात्रदृष्ट्योत्तमतां भजन्ते। भिक्षुः कामी मठपूजादिविमुखो यथाकालं चन्द्ररेखाशङ्करकौशिक्याद्यासु रक्तो विटदेश्यः प्रतिभाति। वेषैकमात्रे भिक्षुत्वे, विटैकशीलत्वात् मत्तविलासादिपात्रेष्विव सुगतानां कापालिकानां पाशुपतानां वा यथासंगतं संस्कारापचयं तथासंगत-मनेनेतिवृत्तेन भैक्षवं प्रहसनमिदं प्रकाशयति। यथा-

"रत्या विमुक्त इव नीलवृषो वितन्तुः" (कु. भै. १०) इत्यादीनि शिष्यवाक्यान्यत्र निदर्शनम्। विद्धशालभञ्जिकाया-मपि यथा गुरुस्तथैव शाण्डिल्यः। नियमेनाचरणीये भिक्ष्वादितत्त्वे कुहनया वृत्त्या कामचारिता परिहासेन प्रद्योतिता। चन्द्ररेखापि भिक्षोस्तत्रानुकूलायते यथोद्यानक्रीडोन्नमनादिकेलिष्विति नात्र विस्तरः।

**कुहनाभैक्षवस्य पात्रपरिचयः।**

| पात्राणि | सम्बन्धः | पात्राणि | सम्बन्धः |
|---|---|---|---|
| सूत्रधारः | प्रहसनप्रावर्तकः | तुरुष्कः | कश्चिद् भटः तुरुष्कसैन्यस्थः |
| नटी | सूत्रधारस्य पत्नी | अहमदखानः | युवा तुरुष्कः महाराजः |
| दामोदरः | गोपिकारमणस्य भिक्षोः शिष्यः | किङ्करः | अहमदखानस्य सेवकः |
| शङ्करकौशिकी | गणिका | चकोरिका | करण्डिकावाहिनी |
| भिक्षुः | गोपिकारमणाख्यो विटः | माधविका | स्त्रीवेषधारी दामोदरः |
| गोविन्दः | गोपिकारमणस्य भिक्षोः शिष्यः | कौमुदिका | चन्द्ररेखायाः सखी |
| चन्द्ररेखा | गणिका | हम्मीरखानः | अहमदखानस्य सैनिकः |

प्रहसनं नाम भगवत्तापसविप्रैरन्यैरपि हास्यवादसंबद्धम्, कापुरुषसंप्रयुक्तम्, परिहासाभाषप्रायं रूपकमिति भरतः (नाट्यशास्त्रम्. १८-१५५)। पाखण्डिविप्रप्रभृतिचेटचेटीविटाकुलं वेषभाषाभिश्चेश्चेष्टितं हास्यवचोन्वितं कामुकादिवचोवेषैः षण्ढकञ्चुकितापसैर्युक्तं रूपकं तदिति धनञ्जयः (दशरूपकम्. ३.५४-५५)। भाणवत्संधिसंध्यगलास्यांगांकैर्विनिर्मितं निन्द्यानां कविकल्पितं वृत्तं प्रहसनमिति विश्वनाथः (साहित्यदर्पणः ६.२६४)। भाणवत्संध्यंगवृत्त्यंगवर्णनं पाषण्डविप्रप्रभृति-चेटचेटीविटाकुलं हास्यवचोन्वितं हास्यरसप्रधानं रूपकं प्रहसनमिति विद्यानाथः (प्रतापरुद्रीयम्. ३.४१-४४)।

**प्रहसनलक्षणस्य कुहनाभैक्षवे समन्वयः।**

निन्द्यानां कविकल्पितं वृत्तम्, हास्यवचोन्वितं हास्यरसप्रधानम्, कापुरुषसंप्रयुक्तम्, कामुकादिवचोवेषैः षण्ढकञ्चुकितापसैर्युक्तं रूपकमित्यादिसर्वाङ्गीणप्रहसनलक्षणं समन्वितं पश्यत, यथा कुहनाभैक्षववाचिकैकदेशाः—

भिक्षुः—(सरोमाञ्चमात्मगतम्) अहो सुखस्पर्शता वेश्याकरस्य!

**रण्डाभिर्बहुधा स्पृष्टे व्यासपूजासु मे पदे। नैतादृशं सुखं क्वापि वञ्चितोऽस्मि चिरं वृथा।। (२३)** इति।

यथा वा— भिक्षुः—अबले किं दण्डप्रयासेन? **त्वामेव तन्वङ्गि समुल्लिपामि द्वाभ्यां कराभ्यामिह पुष्पहेतोः। प्रह्वे मयि न्यस्तपदाम्बुजा वा सुखेन सम्पादय पुष्पजातम्।। (२५)** (चन्द्ररेखायाः पुरतः प्रह्वस्तिष्ठति)। यथा वा— **गाढं समाश्लिष्य नितम्बमस्याः करान्तसंस्पृष्टनितम्बमूलः। हा हन्त शाखामृगरूपभाजा हतेन दैवेन निवारितोऽस्मि।। (२६)** इति।

यथा वा— भिक्षुः—**जायते विघ्नमेघालिश्चन्द्ररेखावलोकने । सच्छिष्येण त्वया भद्र मारुतेनापसार्यते।।** (४८) इति। यथा वा— भिक्षुः—(सर्वतोऽवलोक्य) अहो वृक्षवाटिकायाः सौभाग्यम्! **हसन्तीव लताः पुष्पैर्वर्धयन्ति पिकस्वरैः। मानसावर्जने पुंसां वेश्याभिश्शिक्षिता इव।।** (४९) इत्थं प्रहसनलक्षणं कुहनाभैक्षवे सम्यक्समन्वितम्। विस्तरस्तु सहृदयैः स्वयमूह्यम्।

**रूपकान्तरसंवादः।**

संवादो ह्यन्यसादृश्यं तत्पुनः प्रतिबिम्बवत्। आलेख्याकारवत्तुल्यदेहिवच्च शरीरिणाम्॥ (ध्वन्यालोकः-४.१२) इति, **तत्र पूर्वमनन्यात्म तुच्छात्म तदनन्तरम् । तृतीयं तु प्रसिद्धात्म नान्यसाम्यं त्यजेत्कविः॥** (ध्वन्यालोकः-४.१३) इति चानन्दवर्धनोक्तिस्वारस्येन संवादतत्त्वमनुस्मारयतेवात्र कुहनाभैक्षवस्यापि शरीरिणां तुल्यदेहिवदिवान्यसाम्यरूपः संवादो "मत्तविलासेन" वा "विद्धशालभञ्जिकया" वा "धूर्तसमागमेन" वा "लटकमेलनेन" वा प्रहसनान्तरेण वा सह स्पष्टः। विस्तरभयाच्च सर्वोऽपीह न प्रतन्यते।।

**सन्दर्भग्रन्थसूची**


1. नाट्यशास्त्रम्–आचार्यभरतमुनिविरचितः, परिमलपब्लिकेशनस्, दिल्ली, प्रथमसंस्करणम् – १९९८.
2. मलयमारुतः, चतुर्थः स्पन्दः–वि. राघवन्, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, १९७८.
3. श्रीजगन्नाथवल्लभनाटकम्, विष्णुप्रिया ओझा, फ्रेण्डस् पब्लिशर्स १९८२.
4. साहित्यदर्पणः–विश्वनाथविरचितम्, काशीसंस्कृतग्रन्थमाला १४५, चौखम्बासंस्कृतसंस्थान, वाराणसी, पुनर्मुद्रणम् – २०११.
5. संस्कृत नाटिकाओं का नाट्यशास्त्रीय अध्ययन, डॉ. प्रमिला संजय, रोशन ऑफसेट प्रेस, दिल्ली-११०००२, २००६.
6. दशरूपकम् – धनञ्जयः, धनिकाकृतावलोकसहितम्, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, प्रथमसंस्करणम् – १९६७.
7. अलङ्कारशास्त्रस्येतिहासः – डा. जगदीशचन्द्र मिश्रः चौखम्बा प्रकाशनम्, वाराणसी, प्रथमसंस्करणम् -२००१.
8. शृङ्गारप्रकाशः भोजराजकृतः, द्वितीयो भागः, महामहोपाध्यायो रेवाप्रसादो द्विवेदी, सदाशिवकुमारो द्विवेदी, इन्दिरागाँधीराष्ट्रिय-कलाकेन्द्रम्, नईदिल्लीकालिदास-संस्थानम्, वाराणसी-२२१००१, २००७.
9. सौन्दर्यशास्त्रम्, ममताचतुर्वेदी, राजस्थानहिन्दीग्रन्थअकादमी, जयपुरम्, २००२.
10. संस्कृत नाटिकाओं का नाट्यशास्त्रीय अध्ययन, डॉ.प्रमिला संजय, रोशन ऑफसेट प्रेस, दिल्ली-११०००२, २००६.
11. श्रीजगन्नाथवल्लभनाटकम्, विष्णुप्रिया ओझा, फ्रेण्डस् पब्लिशर्स, १९८२.
12. विदग्धमाधवम्, श्रीरूपगोस्वामिविरचितम्, चौखम्बासंस्कृतप्रतिष्ठानम्, दिल्ली-७, १९७०.
13. नाट्यदर्पणम्, पं. थानेश्चन्द्र उप्रैती, परिमलपब्लिकेशन्स्, दिल्ली-७, १९९४.
14. नाटकचन्द्रिका, पं. बाबुलालशुक्लेन सम्पादिता, चौखम्बासंस्कृतप्रतिष्ठानम्, दिल्ली-७, १९६४.
15. The Latakamelana, (Dramatic Prakrit Satirising the Digambara Jains) composed by Shankhadhara, Bühler & Petersen, Cat. Guj. II. 122, 1883-4.; A Journey of Literary and Archaeological Research in Nepal and Northern India During the Winter of 1884-85, by Cecil Bendall, 1886. Reprint: Publ. Asian Educational Services, New Delhi-2, 1991, ISBN: 8120606159, 9788120606159.
16. The Dhūrtasamāgama : Jyotirīśvara, Jagadīśvara Bhaṭṭacārya.; Carl Cappeller, 1883.; Dhūrtasamāgama & Hāsyārṇava, Ed. Cappeller, Volume 1571 of Harvard College Library Preservation Microfilm Programme, 44 pages.
17. विद्धशालभञ्जिका, राजशेखरकृता, भास्कर-रामचन्द्र आप्टे द्वारा सम्पादिता-पूना-1886.
19. मत्तविलासप्रहसनम्, महेन्द्रविक्रमवर्मदेवकृतम्, चौखम्भाविद्याभवनग्रन्थ-माला, वाराणसी-1966.; त्रिवेन्द्रं संस्कृत सीरीस-4, 1917.



**वरीयान् सहायकाचार्यः , साहित्यविभागाध्यक्षश्च,**

**रा.सं.सं. क.जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्,**

# प्राकृतिक आपदाओं का ज्योतिषशास्त्रा की द्वारा पूर्वानुमान

✍डॉ. राजीव रंजन

भारतीय ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्त्तक आचार्यों ने अपनी मेधा शक्ति द्वारा न केवल मनुष्य-मात्र अपितु सम्पूर्ण विश्व से सम्बन्धित शुभाशुभ फलादेश करने की विधि को विकसित किया। सृष्टि के आरम्भ से ही प्राकृतिक आपदाओं ने विश्व की कई विकसित और विकासशील सभ्यताओं को नष्ट कर दिया है अथवा उसे अपूरणीय क्षति पहुँचाई है। वैज्ञानिक शोध भी यह सिद्ध करते हैं कि प्राकृतिक आपदाओं ने ही डायनोसोर सदृश विशाल जीवों का असितत्व ही समाप्त कर दिया था। आज की परिस्थिति भी उस प्राचीन कालीन विवशता से भिन्न नहीं है। वत्र्तमान परिदृश्य पर दृष्टिपात करें तो स्पष्ट हो जाता है कि ये प्राकृतिक आपदाएँ आकस्मिक रूप से आती हैं और उस क्षेत्रा विशेष की मानव सभ्यता, सम्पत्ति, सामाजिक व आर्थिक स्वरूप को तहस-नहस कर देती हैं तथा अपना व्यापक व विनाशकारी प्रभाव छोड़ जाती हैं। आज के युग को वैज्ञानिक युग कहा जाता है फिर भी इन प्राकृतिक आपदाओं के समक्ष मनुष्य असहाय नशर आता है। भूकम्प, ज्वालामुखी विस्फोट, बाढ़, चक्रवाती तूफान, सुनामी, सूखा, बादल का फटना, भूस्खलन, उल्कापात, वज्रपात, हिमस्खलन आदि घटनाओं की गणना हम प्राकृतिक आपदाओं के रूप में कर सकते हैं। इन आपदाओं के पूर्वानुमान तथा समाज पर इनके व्यापक प्रभाव का अध्ययन ज्योतिषशास्त्र के संहिता स्कन्ध में अत्यन्त विस्तार से किया गया है। मनुष्यों में पापों के आधिक्य और अविन्य से ही ये उपद्रव या उत्पात होते हैं। मनुष्यों के इन पापकर्म तथा अविनय से देवगण अप्रसन्न होते हैं तथा इन उत्पातों को उत्पन्न करते हैं।विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं के ज्योतिषशास्त्र की विभिन्न विधाओं द्वारा पूर्वानुमान विधि को क्रमशः प्रस्तुत करते हैं।

**प्राकृतिक आपदाओं के पूर्वानुमान में प्रयुक्त विभिन्न प्रमुख ज्योतिषशास्त्रीय सिद्धान्त-** संहिता ज्योतिष में नवग्रहों के विभिन्न नक्षत्रों में चार द्वारा प्राकृतिक आपदा विषयक फलादेश की विधियाँ बताई गई हैं। विभिन्न ग्रहों के आपसी युति व दृष्टि सम्बन्ध भी इन घटनाओं की पूर्व सूचना देने में समर्थ हैं। विभिन्न चक्रों के निर्माण द्वारा अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, निर्घात, दिग्दाह, भूकम्प आदि का फलादेश बताने की विधि नरपतिजयचर्यास्वरोदय ग्रन्थ में उपलब्ध होती है । विभिन्न वृक्षों में लगने वाले फल अथवा पुष्पों की मात्रा द्वारा उपरोक्त विषयक फलादेश किया जा सकता है, इसका वर्णन वराहमिहिराचार्य ने अपने ग्रन्थ वाराहीसंहिता के फलकुसुमलताध्याय में की है । काकतन्त्र की विभिन्न विधियाँ इन आपदाओं का पूर्वानुमान करने में सक्षम हैं। हस्तसंजीवन ग्रन्थ प्रश्नकत्र्ता द्वारा हस्तस्पर्श तथा चेष्टाओं से भी बाढ़, सूखा, भूकम्प आदि का फलादेश करना बताता है।शकुन शास्त्र में विभिन्न जीव-जन्तुओं के व्यवहारों के अध्ययन द्वारा इन प्राकृतिक घटनाओं के पूर्वानुमान की विधि बताई गई है। ज्योतिशास्त्र की उपरोक्त विधियों का आश्रय लेकर तथा ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को आधार मानकर विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं के पूर्वानुमान में सहायक सिद्धान्तों तथा बिन्दुओं को क्रमवार रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है।

**अतिवृष्टि/बाढ़-** यदि आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन सूर्यास्त के समय पश्चिम दिशा से हवा बहे तो उस वर्ष अतिवृष्टि होती है। वर्षा ऋतु में यदि राशि चक्र में बुध व शुक्र के समीप सूर्य हो तो अत्यधिक वृष्टि होती है। बुध और शुक्र समीप हों तो भी अतिवृष्टि। जब राशि चक्र में सूर्य से पीछे या आगे समस्त ग्रह हों तो भूमि समुद्र के समान बन जाती है। त्रिनाड़ी चक्र में जब समस्त शुभ व पाप ग्रह एक नाड़ी में हों तो अत्यधिक वृष्टि। सप्तनाड़ी चक्र के जलनाड़ी में शुक्र व चन्द्रमा के होने पर अतिवृष्टि। वर्षा ऋतु में जिस दिन एक ही नक्षत्र में कई ग्रह अथवा समस्त ग्रह एकत्रित हों तो अतिवृष्टि। अमृत नाड़ी में यदि चन्द्रमा के साथ 4 या अधिक ग्रह स्थित हों तो सात दिन तक निरंतर घनघोर वृष्टि होती है। चन्द्रमा व भौम एक नाड़ी में, गुरू के उदय व अस्त में, मार्गी होने के समय, वक्री होने पर और संगम हो जाने पर जल नाड़ी में समस्त ग्रह हों तो अत्यधिक वृष्टि। अर्जुन वृक्ष पर यदि पुष्पादि का अधिक्य हो तो उस वर्ष प्रभूत वृष्टि। प्रश्नकालीन लग्न में जलराशि में स्थित चन्द्रमा पर बलवान शुक्र की दृष्टि, अथवा बलवान चन्द्रमा पर शुक्र की दृष्टि भारी वर्षा कराता है। सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, शनि व राहु जलीय राशियों में हो और शुक्र, बुध स्थिर राशि में हो तो भीषण वर्षा होती है। वर्षा के प्रश्नकालीन के शकुन में कृष्ण गौ या भरे हुए कृष्ण घड़े का दर्शन हो तो प्रभूत वृष्टि। यदि प्रश्न कारक पाँच अंगुली के स्पर्श में अंगूठे का स्पर्श करे तो महावृष्टि। काक बलिपिण्ड द्वारा यदि पूर्वानुमान किया जाये तो जलपिण्ड ग्रहण करने पर प्रभूत वर्षा। काक यदि वृक्ष के अग्रभाग पर घोंसला बनाए तो अति वर्षा।

**भूस्खलन-** चन्द्रमा अनुराधा नक्षत्र में हो तथा बुध व मंगल पुष्य नक्षत्र में हो तो भूस्खलन का भय। अत्यधिक वर्षा के ग्रहयोग पर्वतीय क्षेत्रों में भूस्खलन योग का निर्माण करते हैं। ग्रहों का जलीय, प्रचण्ड व सौम्य नाड़ी में होना भी भूस्खलन का भय उत्पन्न करते हैं। चन्द्रमा वृश्चिक या धनु राशि तथा शुक्र सिंह में हो तो हिमस्खलन या भूस्खलन की संभावना। भूस्खलन जैसी प्राकृतिक आपदा का मूल कारण शनि और राहु की युति को माना जा सकता है। राहु को वन तथा पर्वतीय प्रदेश का स्वामी माना जाता है और शनि के साथ युति इसे प्रबल भूस्खलन का कारण बनाता है।

**सुनामी-** सप्तनाड़ी चक्र, त्रिनाड़ी चक्र के सूक्ष्म विश्लेषण द्वारा इस प्राकृतिक आपदा का पूर्वानुमान किया जा सकता है। समुद्र के अंदर आने वाले भूकम्प इस आपदा के प्रमुख कारण है। अतः समुद्री इलाकों में भूकम्प के ग्रहयोग, गोचर, शकुन या प्रश्नादि द्वारा इस आपदा का पूर्वानुमान किया जाता है। सूर्य और शनि यदि वृश्चिक अथवा मेष राशि में स्थित हों तो समुद्री तूफान का योग बनता है। सूर्य ग्रहण व चन्द्र ग्रहण के समय मंगल, बुध व शनि का आपस में संबंध हों तो सुनामी का भय होता है। इसी तरह, राहु व केतु के मध्य चार या अधिक ग्रह अशुभ स्वामियों के नक्षत्र पर हों तथा शनि का मंगल, गुरू अथवा बुध के साथ संबंध बन रहा हो तो भी समुद्री तूफान का भय होता है।

**धूलिवर्षा-** गुरू, शनि, शुक्र तथा बुध एक ही राशि में स्थित हों तो धूलिवर्षा का योग बनता है।

**उल्का पतन-** सूर्य से पाँचवे या सातवें चन्द्रमा और छठे स्थान में मंगल हो तो उल्कापात होता है। यदि शुभ ग्रह मित्र भावों में स्थित न हों तो पर्वतों पर विद्युत्पात होता है।

**अनावृष्टि/सूखा-** आषाढी पूर्णिमा के दिन सूर्यास्त के समय आग्नेय कोण अथवा दक्षिण दिशा से वायु चले तो उस वर्ष अनावृष्टि होती है तथा धान्यों का विनाश होता है ।इसी दिन और इसी समय यदि नैऋत्य कोण से हवा बहे तो भी अनावृष्टि होती है। सूर्य के अगली राशि में यदि मंगल हो तो अनावृष्टि का योग बनता है। बुध और शुक्र के मध्य सूर्य स्थित हो तो सूखा। त्रिनाड़ी चक्र में नपुंसक ग्रह तथा स्त्री ग्रह एक ही नाड़ी में हों तो अनावृष्टि। वर्षा ऋतु में जब चन्द्रमा व शुक्र एक ही राशि में पाप ग्रह से दृष्ट या युक्त हों तो अल्पवृष्टि या अनावृष्टि। चन्द्रमा यदि केवल पापग्रह से मिले तो अल्पवृष्टि। सप्तनाड़ी चक्र के जिस नाड़ी में केवल पापग्रह स्थित हों तो उसमें वृष्टि का अभाव होता है। जिस वर्ष शीशम में अधिक फल लगें तो दुर्भिक्ष का भय। निचुल वृक्ष में फल-फूल अधिक हों तो अवृष्टि। यदि लताओं के पत्रों में छिद्र, शुष्कता व रूक्षता हों तो उस वर्ष वृष्टि का अभाव। यदि खैर के वृक्ष में पुष्पादि की वृद्धि हो तो अकाल का प्रकोप। वर्षा के प्रश्न लग्न में चतुर्थ भाव में शनि और राहु हो तो उस वर्ष महाघोर दुर्भिक्ष। यदि प्रश्नकारक पाँच अंगुली के स्पर्श में अनामिका को स्पर्श करे तो अत्यल्प वृष्टि। काकबलि पिण्ड में यदि कौआ वायव्य कोण का पिण्ड भक्षण करे तो अनावृष्टि। यदि त्रिपिण्ड में से अंगार पिण्ड ग्रहण करे तो वृष्टि का अभाव। काक वृक्ष के नीचे थड़ में घर बनाए तो अनावृष्टि और अकाल। किसी वृक्ष, भवन, वल्मीक के कोटर में घोंसला बनाए तो अकाल का प्रबल भय। मंगल आश्लेषा नक्षत्र में हो तो अकाल।

**तूफान-** आषाढी पूर्णिमा के दिन सूर्यास्त के समय वायत्य कोण से वायु चले तो उस वर्ष आंधी का भय होता है। बुध के साथ मंगल या शनि का योग हो तो तूफान के साथ-साथ अग्नि भय भी होता है। त्रिनाड़ी चक्र की एक ही नाड़ी में नपुंसक व स्त्री ग्रहों का योग हो तो तीव्र वायु चलती है, इसी प्रकार समस्त पुरुष ग्रह एक ही नाड़ी में हो तो भी वायु का प्रकोप होता है। सप्तनाड़ी चक्र के चण्ड अथवा वायु नाड़ी में ग्रह हों तो आंधी-तूफान का भय। विशाखा, अनुराधा व ज्येष्ठा अर्थात् नपुंसक नक्षत्रों में योग होने पर तीव्र वायु चलती है और प्रभूत विनाश होता है। कपित्थ वृक्ष में फल-फूल अधिक हों तो उस वर्ष वायु का प्रकोप। कौआ वृक्ष के वायव्य कोण की शाखा पर घोंसला बनाए तो आंधी-तूफान का भय। नैऋत्य कोण का घोंसला भी आंधी-झंझावत का भय उत्पन्न करता है। अक्षय तृतीया के दिन की ग्रहस्थिति के अनुसार भौमचक्र का निर्माण करें, इस चक्र में राहु जहाँ पड़े, उस नक्षत्र के अक्षरानुसार जो देश व स्थान हों वहाँ बवंडर, आंधी आदि का प्रकोप।दो या उससे अधिक ग्रह जल राशि, दहन नाड़ी, प्रचण्ड नाड़ी और सौम्य नाडियों में हो तो तूफान का भय। चन्द्र बुध की युति हो तथा सूर्य मूल नक्षत्र में हो, जब बृहस्पति और बुध सूर्य के साथ स्थित होकर स्वराशियों में स्थित ग्रहों के अनुवर्त्ती हों तो भयंकर तूफान आता है ।इसी प्रकार मनुष्य, सर्प तथा छोटे जन्तु युद्ध करते दिखाई दें तो भी तूफान का भय होता है।

**भूकम्प-** जहाँ तक ज्योतिषशास्त्र के ग्रन्थों का प्रश्न है इन ग्रन्थों में भूकम्प के कारणों की अपेक्षा भूकम्प के पूर्वानुमान के सम्बन्ध में अधिक चर्चा की गई है। ग्रहचार अध्यायों मंे यथा भौमचार, शनिचार, राहु चार, ग्रहणाध्याय आदि में विभिन्न ग्रहस्थितियों की अत्यन्त विस्तृत चर्चा की गई है जो संभावित भूकम्प के द्योतक माने गए हैं। शकुन शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों यथा वसन्तराज शाकुन में भी इस सन्दर्भ में चर्चा की गई है। भूकम्प से पूर्व पशुपक्षियों के व्यवहार में आने वाले परिवर्तनों को भी भूकम्प पूर्वानुमान की सहायक सामग्री के रूप मंे प्रयोग किया जा सकता है। सभी ग्रहों की युति एक ही राशियों में हो। यदि मंगल पूर्वा-फाल्गुनी नक्षत्र में उदय करता है अथवा उत्तराषाढा नक्षत्र में वक्री होता है तथा रोहिणी नक्षत्र में अस्त होता है तो सम्पूर्ण पृथिवी मण्डल का भ्रमण अथवा भूकम्प होता है। यदि मंगल मघा एवं रोहिणी नक्षत्र के योगतारा का भेदन करता है तो भूकम्प होता है। विजय संवत्सर में भूकम्प के योग बनते है। धनु राशि में बृहस्पति के जाने पर भूकम्प आता है। शनि जब मीन राशि में हो तो भी भूकम्प होते हैं। वृष तथा वृश्चिक राशि का भूकम्प से विशेष सम्बन्ध दृष्टिगत होता है। गुरू वृष या वृशिचक राशि में हों, तथा बुध के साथ युति कर रहा हो अथवा समसप्तम में हो। राहु मंगल से सप्तम में, बुध मंगल से पंचम में, तथा चन्द्रमा बुध से केन्द्र में हो। मन्दगति ग्रह यदि एक दूसरे से केन्द्र, षष्ठाष्टक, अथवा त्रिकोण भावों में हो, अथवा युति सम्बन्ध बना रहा हो। चन्द्रमा तथा बुध की युति हो एवं दूसरे की राशि या क्षेत्र में हो अथवा एक ही ग्रह के नक्षत्र में हों।सूर्य के सतह पर आनेवाले ज्वार-भाटीय आवेगों का आधिक्य भी भूकम्प की संभावना उत्पन्न करता है। भूकम्प स्थान को कम्पित कर अपने स्थान से हटा देता है । सूर्य की सतह पर दिखने वाले धब्बों में होने वाले विशिष्ट परिवर्तन भी भूकम्प का संकेत देते हैं। प्रायः देखा गया है कि भूकम्प से ठीक पूर्व पशु पक्षियों के व्यवहार मंे काफी परिवर्तन आ जाता है। अपेक्षाकृत आधिक संवेदनशील पक्षी यथा-काक, कबूतर, चील आदि का व्यवहार बदल जाता है। ये समूह में शोर करते हुए उड़ने लगते हैं। कुत्ते तथा गाय आदि भी उच्च स्वर में बोलने लगते हैं। श्वानों का रूदन तथा गौवंश के व्यवहार पर सूक्ष्म दृष्टिपात द्वारा उत्पातों का पूर्वानुमान कर सकते हैं। आधुनिक मुख्य धारा के वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है कि जापान के समुद्री तट पर आए सुनामी से ठीक पहले वहाँ पाए जाने वाले डाल्फिन तथा शार्क मछलियों के व्यवहार में काफी परिवर्तन आ गया था। कोई मन्दगति ग्रह वक्री से मार्गी हो रहा हो अथवा मार्गी से वक्री, यह कालावधि भूकम्प की दृष्टि से अत्यधिक संवेदनशील मानी गई है। भूकम्प प्रायः पूर्णिमा अथवा अमावस्या के समीपस्थ तिथियों को आता है।

ज्योतिषशास्त्र की उपरोक्त विधियों का आश्रय लेकर वातावरण तथा मौसम में होने वाले आकस्मिक परिर्वतनों का फलादेश सहज ही किया जा सकता है और मानवता के कल्याण में इस शास्त्र का प्रयोग ही श्रेष्ठतम सिद्ध होता है।

**सन्दर्भ सूची-**


1 ज्योतिर्विदाभरणम; 6/16

2 व.सं.; 45/2

3 नरपतिजयचर्यास्वरोदय; 6/16

4 वाराही संहिता; 29/11-12

5 हस्तसंजीवन, स्पर्शनाधिकार; 3/44

**6 नारदसंहिता;** 35/3

**7 भ्रदबाहुसंहिता;** 9/63

8 वाराही संहिता; 29/11

**9 बृहद्दैवज्ञरंजनम्;** 5/50

10 हस्तसंजीवन, स्पर्शनाधिकार; 3/44

**11 भ्रदबाहुसंहिता;** 27/1

12 व.सं.; 4/7

13 मयूर चित्रकम्; 2/62

14 अद्भुत सागर सां; पृ. 10


**असिस्टेन्ट प्रोफेसर (ज्योतिष), संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय**

# वेदकालीन पत्नी का भारतीय संस्कृति में योगदान

✍ डा. अपर्णा धीर

वैदिक ग्रन्थों में प्रतिपादित संस्कृति में युगों तक मानव मात्र का मार्गदर्शन करने की क्षमता है। वैदिक संस्कृति और समाज में कहे गये सर्वजन-कल्याणकारी नियमों का पालन करने से समाज की विसंगतियाँ दूर होती है। मनुष्य का एक साथ रहकर, मिलकर एवं परस्पर सहयोग करके जीवनयापन का नाम समाज है। इस उदात्त भावना के दर्शन ऋग्वेद में होते हैं। कहा गया है कि मनुष्य सब ओर से मनुष्य की रक्षा करे। समाज की एक इकाई परिवार कहलाती है। परिवार में विद्यमान परस्पर स्नेह ही समाज में सौमनस्य की भावना की पूर्ति करता है। अथर्ववेद में पारिवारिक सौमनस्य को महत्तवपूर्ण बताते हुए माता-पिता तथा पुत्र, भाई-भाई, भाई-बहन, पति-पत्नि में पारस्परिक हित-चिन्ता एवं पूर्ण सौमनस्य की कामना को व्यक्त किया गया है।

वैदिक समाज व्यवस्था में समन्वय एवं कर्त्तव्यनिष्ठा पर बल दिया गया है। समाज में परिवार महत्तवपूर्ण वर्ग माना जाता है। परिवार ही समाज एवं राष्ट्र का आधार है। वैदिक संहिताओं और ब्राह्मणों में कुटुम्ब (परिवार) अर्थ में 'कुल' शब्द का प्रयोग मिलता है। प्रायः वैदिक काल से ही परिवार का मूल स्तम्भ पति-पत्नि का युग्म माना जाता रहा है। पत्नि का सम्बन्ध पति के परिवार से विवाह पश्चात् ही बनता है क्योंकि वह दूसरे परिवार से आती है परन्तु पति के साथ मिलकर बनाये गये नये परिवार में पत्नि की भूमिका विशेष महत्त्व रखती है। वस्तुतः यही नया परिवार आगे चलकर समाज व देश में सामञ्जस्य की स्थापना का कारक है। इस प्रकार परिवार की आधारभूत इकाई पत्नि है। अतः वेदों में वर्णित पत्नि के गुण, अधिकार कर्त्तव्यों को जानना परमावश्यक है। प्रस्तुत शोधलेख में इसी ओर इङ्गित करते हुए वेदकालीन पत्नी का भारतीय संस्कृति में योगदान को दर्शाया जा रहा है।

**पत्नि के लिए प्रयुक्त शब्द :-**

**वधू -** ऋग्वेद में और उत्तरवर्ती साहित्य में 'वधू'शब्द का प्रयोग बहुलता से हुआ है। ऋग्वेद में 'वधू' शब्द दूल्हन अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। द्रष्टव्य है कि लौकिक संस्कृत साहित्य में यह वधू शब्द केवल दुल्हन अर्थ का वाचक नहीं अपितु पुत्र और पौत्र की पत्नी भी सूचक है।

**पत्नी -** ऋग्वेद में 'पत्नी' शब्द स्वामिनी, शासिका एवं विवाहित स्त्री के अर्थ में मिलता है (ऋ. 7.75.4, 1.62.11) शतपथ ब्राह्मण में पत्नी को ही स्त्री का वास्तविक स्वरूप मानते हुए 'पत्नी' शब्द का प्रयोग किया गया है।

**जनि, जनी, जानि एवं जाया -** 'जनि' अथवा 'जनी' शब्दों का प्रयोग प्रायः पत्नी अर्थ में हुआ है।यथा 'पत्युर्जनित्वम्' (ऋ. 10.18.8)। 'जानि' शब्द भी पत्नी अर्थ का प्रतिपादक है।विवाहित स्त्री के अर्थ में 'जाया' शब्द वैदिक ग्रन्थों में मिलता है। सन्तान को जन्म देने और पति से प्रेम की पात्र होने के कारण पत्नी के लिए 'जाया' शब्द का प्रयोग किया जाता था। शतपथ ब्राह्मण में भी यज्ञ के प्रसंग में यजमान की स्त्री को 'जाया' शब्द द्वारा पुकारा गया है।

**ग्ना-** केवल दिव्य पत्नियों के अर्थ में पत्नीवाचक 'ग्ना' शब्द का ऋग्वेद में कथन किया गया है। एक स्थान पर वर्णित है कि त्वष्टा दिव्य पत्नियों के साथ एक मन होकर रथ को प्रेरित करें।

**गृहपत्नी एवं विश्वपत्नी -** इन सब के अतिरिक्त परिवार की स्थिति पर प्रकाश डालने वाले 'पत्नी' अर्थ के सूचक 'गृहपत्नी' तथा 'विश्वपत्नी' शब्द भी वैदिक मन्त्रों में मिलते हैं। एकाकी परिवार में जहाँ पुरुष प्रधान था, वहाँ उसकी स्त्री 'गृहपत्नी' कहलाती थी और बङे संयुक्त परिवार के प्रधान पुरुष की पत्नी 'विश्वपत्नी' कहलाती थी।

**पत्नी के लिए प्रयुक्त विषेशण :-** वैदिक मन्त्रों में कहीं-कहीं पत्नी के लिए ऐसे विषेशणों का प्रयोग किया गया है, जो निश्चित ही परिवार में पत्नी के गौरवपूर्ण स्थान के सूचक है। यथा- अथर्ववेद में कथित 'साम्राज्ञी' शब्द। यहाँ नववधू को कहा गया है कि 'तू अपने श्वसुर, सास, देवर, ननद की साम्राज्ञी हो जा' अर्थात् सर्वोच्य शासक के पद पर पहुँच जा। ऋग्वेद में पत्नी को ही गृह कहकर उसे कुटुम्ब की अधिकारिणी अथवा स्वामिनी बताया गया है। शतपथ ब्राह्मण में पत्नी को पति का आधा भाग मानते हुए पुरुष को पत्नी के बिना अपूर्ण बताया गया है और कहा गया है कि पत्नी के बिना पुरुष स्वर्ग नहीं जा सकता। विवाह संस्कार द्वारा पति-पत्नी संयुक्त रूप से ही पूर्ण होकर यज्ञादि धार्मिक अनुष्ठान एवं सृष्टि का विस्तार करते हैं। यही बात तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी प्रतिपादित है।शतपथ ब्राह्मण में पत्नी को 'वामांगिनी' कहकर भी सम्बोधित किया गया है।पति की जीवितावस्था में पत्नी 'सुभगा' कहलाई जाती थी।

**पत्नी के गुण-** हार्दिक संयोग ही वैदिक विवाह का आदर्श है। सामञ्जस्य के लिए आत्म समर्पण आवश्यक है, इसी से ही समाज के अस्तित्व को बल और जीवन मिलता है। अतः पत्नी में आत्म समर्पण की भावना होनी चाहिए। पत्नी को दयालु, संवेदनशील, बुद्धिमान, भावुक, वात्सल्यपूर्ण, अनुशासनप्रिय गुणों से युक्त होना चाहिए। अथर्ववेद में निर्देश है कि पत्नी को शान्त स्वभाव वाली तथा मधुर वाणी बोलने वाली होना चाहिए।

पत्नी के अधिकार एवं कर्त्तव्य :- पत्नी को सदा परिवार के सदस्यों से स्नेह रखना चाहिए। उसे परिवार के सुख और कल्याण हेतु पति की सहभागी बनना चाहिए।

**धार्मिक अधिकार एवं कर्त्तव्य-** ऋग्वैदिक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि उस काल में पत्नी धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लिया करती थी। पत्नीयों सहित देवों द्वारा अग्नि की पूजा किये जाने का यहाँ उल्लेख किया गया है। जहाँ एक और पत्नी अपने पति के साथ यज्ञादि अनुष्ठान कराया करती थी, वहीं दूसरी ओर वैदिक काल में पत्नी को धार्मिक कृत्यों को करने का स्वतन्त्र अधिकार भी था। इस तथ्य के उदाहरण वैदिक मन्त्रों में कहे गये हैं। कथित है कि पत्नी ने अपने पति की अनुपस्थिति में इन्द्र और वरुण को हवि देकर तथा नमस्कार करके प्रसन्न किया था। इसी प्रकार अपाला के द्वारा इन्द्र के लिए किये गये सोम के सवन का भी उल्लेख मिलता है। ऐसा माना जाता था कि जो पत्नी नित्य अग्नि का आह्वान करती है, वह अपने को सौभाग्यशाली बनाती है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार हवि बनाना पत्नी का कार्य बताया गया है।

**गृह सम्बन्धी अधिकार एवं कर्त्तव्य-** नववधू के द्वारा किये गये गृह-प्रवेश के समय दिया गया वैदिक आदेश ही पत्नी के गृहसम्बन्धी अधिकारों एवं कर्त्तव्यों को ज्ञात कराता है। कहा गया है कि (हे पत्नी तुम) यहाँ अपने प्रिय को सन्तान से समृद्ध करो (तथा) इस गृह में गार्हपत्य के लिए (सदा) जागरूक रहो।इस प्रकार प्रस्तुत मन्त्र में पत्नी के प्रति की जाने वाली अपेक्षाओं का संकेत दिया गया है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन पत्नी पर पति के घर में रहने में रहने वाले सभी परिवार जनों की देखभाल का उत्तरदायित्व था। साथ ही उसे घर में रहने वाले सेवकों और पशुओं का ध्यान भी रखना होता था।

**साम्पत्तिक अधिकार एवं कर्त्तव्य**

ऋग्वेद में पत्नी के साम्पत्तिक अधिकारों का कोई संकेत नहीं मिलता परन्तु तैत्तिरीय-संहिता में स्पष्टतः स्त्री को 'अदायादी' कहा गया है- 'तस्मात् स्त्रियो निरिन्द्रिया अदायादीः। (६.५.८.२)

**सामाजिक अधिकार एवं कर्त्तव्य-** वैदिककाल में पत्नी की सामाजिक स्वतन्त्रता इस तथ्य से परिलक्षित होती है कि वह (पत्नी) 'समन' अर्थात् मेले मे नये वस्त्र धारण एवं प्रसाधन का प्रयोग करके हुई मेले का आनन्द लेने जाया करती थी।इसके अतिरिक्त तैत्तिरीत-संहिता में कहा गया 'दैधिषव्य' शब्द (अर्थात् विधवा और परित्यक्ता स्त्री का पुत्र) का उल्लेख संहिता काल में विधवा स्त्रीयों के सामाजिक अधिकारों की ओर ध्यान दिलाता है।

**वेदकालीन आदर्श पत्नीयाँ :-** आदिकाव्य रामायण में वर्णित देवी सीता का चरित्र जिस प्रकार आज तक आदर्श पत्नी के रूप में भारतीय जनमानस पर अपनी छाप बनाए हुए है, उसी प्रकार वैदिक वाङ्मय में वर्णित कई पत्नियाँ अपने चरित्र एवं प्रवीणता के कारण आदर्श पत्नी कही गई हैं।यथा ऋषि याज्ञवल्क्य की पत्नी का विशेष योगदान द्रष्टव्यः है। विशाल ज्ञान वैभव का परिचय देने वाली मैत्रेयी ने बौद्धिक स्तर पर अपने पति याज्ञवल्क्य के समक्ष गम्भीर तात्त्विक तर्क-वितर्क द्वारा गुढ अमृतत्त्व को जाना। इसी प्रकार ऋषि अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा के संयम, मर्यादा, तप, त्याग, और पतिव्रत धर्म की प्रशंसा से कौन परिचित नहीं है। स्त्री विवाह पश्चात् पति का पूर्ण साथ देती थी, इस तथ्य की ओर शतपथ ब्राह्मण में कथित शर्यात-पुत्री सुकन्याके वचन ध्यान आकृष्ट करते हैं- " मेरे पिता ने जिसे मुझे दिया है, उसे जीवनपर्यन्त नहीं छोडूँगी। माँ का आचरण ही सन्तानों में उत्तम गुणों के व्यवहार को देता है। देवी जबाला के सत्य कथन से ही उसका पुत्र सत्यकाम सत्यनिष्ठा के प्रति सजग रहा। जाबाला ने अपने पुत्र को साफ साफ कह दिया था कि 'वह सत्यकाम के पिता को नहीं जानती, वह घर घर काम करती थी'। जबाला के इस वचन को जब उसके पुत्र सत्यकाम ने ऋषि के सम्मुख अपने परिचय में कहा, तब ऋषि ने उसकी सत्यवादिता से प्रसन्न होकर उसे 'सत्यकाम जबाल' के नाम से सम्बोधित किया।

**आदर्श वैदिक पत्नियों का भारतीय संस्कृति में योगदान :-** पत्नी के सम्बन्ध उपरोक्त सभी वचन भारतीय संस्कृति को प्रभावित करते रहे हैं। प्रायः ऐसा कहा जाता है कि नववधू के आते ही परिवार टूट जाते हैं क्योंकि वर्तमान समय में नव दम्पत्ति स्वतन्त्र परिवार की इच्छा करते हैं। इसी कारण वेद में आदेश दिया गया है कि विवाह के पश्चात नव दम्पत्ति को घर से अलग नहीं होना चाहिए। वस्तुतः पत्नी ही है, जो पति के परिवार में जाकर सबको स्नेहपूर्ण व्यवहार द्वारा एक सूत्र में बाँधे रखती है। वैदिक परम्परा में वर्णित 'वधू' शब्द ही भारतीय संस्कृति में 'कुलवधू' शब्द के रूप में विस्तृत अर्थ को प्राप्त हुआ। पत्नीवाचक उपरोक्त सभी शब्दों मे से केवल 'पत्नी' और जाया शब्द ही लोक प्रचलन में मुख्यतः रहे हैं। हो सकता है कि वर्तमान पत्नी को अर्धांगिनी पुकारे जाने का श्रेय शतपथ और तैत्तिरीय ब्राह्मणो में वर्णित पत्नी के बिना पति की अपूर्णता वाले कथन को दिया जा सकता है। ऋषियों के इसी दृष्टिकोण के कारण शंकर-पार्वती, राम-सीता, अत्रि-अनुसूया, वशिष्ठ-अरुन्धति, नल-दमयन्ती, दुष्यन्त-शकुन्तला आदि के नाम सदैव इसी रूप मे याद किए जाते हैं। भारतीय संस्कृति में पत्नियों द्वारा अपने पति से उपनाम प्राप्त करने की प्रथा के दर्शन भी वैदिक ग्रन्थों मे होते हैं। यथा ऋग्वेद में इन्द्र, वरुण और अग्नि की पत्नियों को इन्द्राणी, वरुणानी, और अग्नायी पुकारा गया है(५.४६.८) । वैदिक काल में शुभ एवं धार्मिक कार्यों में पत्नियाँ सदैव आमन्त्रित होती और उन कार्यों को करने में स्वतन्त्र भी हुआ करती थी। यह तथ्य निश्चित ही आज भी प्रेरणादायक है। सुकन्या के वचन भारतीय संस्कृति में पत्नी की मर्यादा और धर्मपरायणता के सूचक हैं।

**निष्कर्ष -** इस प्रकार कह सकते हैं कि वैदिक संस्कृति हमे आदर्श, आनन्दमय एवं सुखी परिवारिक जीवन जीने की कला सिखाती है। परिवार की सुव्यवस्था एवं शान्ति समाज एवं राष्ट्र की उन्नति के द्योतक हैं। वैदिक समाज के निर्माण और भारतीय संस्कृति के उत्थान में मैत्रेयी, सुकन्या जैसीपत्नियों का योगदान नित्य स्मरणीय है। भारतीय संस्कृति मे पत्नी को गृहस्वामिनी अथवा गृहलक्ष्मी मानने की परम्परा का संदेश निःसन्देह वेदों द्वारा दिया गया है। वर्तमान युग में पत्नी के विषय में उपरोक्त वैदिक आदेशों में से प्रायः लोगों को केवल पत्नी से की जाने वाली अपेक्षाएँ याद है परन्तु उसके धार्मिक, सामाजिक आदि अधिकारों मे से सब भूल से गये है। हमे सदैव याद रखना चाहिए कि भारतीय वैदिक परम्परा में पत्नी का गौरवपूर्ण स्थान था। अतः चाहे धार्मिक कृत्य हो, परिवार की देखभाल हो, सन्तान का लालन पालन हो, युद्ध हो इत्यादि आज भी समाज के प्रत्येक क्षेत्र में वेदकालीन पत्नियाँ हमारी पथ प्रेरक हैं।

**सन्दर्भ सूची-**

[1] पुमान् पुमांस परिपातु विश्ववतः। ऋ. 6.75.14
[2] मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षत मा स्वसारमुत स्वसा.....। अथर्व. 3.30.5
[3]यजुर्वेद 18.48: श.ब्रा. 1.1.2.22; 2.1.4.4; 9.5.3.11; 13.4.2.17
[4]पतिर्यद वध्वो वाससा स्वमङ्गमभिधित्सते। ऋ. 10.85.30
[5] तेषां वधूस्तवमसि नन्दिनि पार्थवानां
[6]योषा वै पत्नी। श. ब्रा. 3.8.2.5
[7]रामकुमार राय, वैदिक इण्डेक्स भाग-1, पृ. 307
[8] कलिं याभिर्वित्तजानि दुवस्यथः। ऋ. 1.112.15
[9] जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुमान्। गोपथ ब्राह्मण 1.1.2
[10]श. ब्रा. 1.1.4.13
[11] त्वष्टा ग्नाभिः सजोषा जूजुवद्रथम्। ऋ. 2.31.4
[12] शिवराज शास्त्री, ऋग्वैदिक काल में पारिवारिक सम्बन्ध, पृ. 349
[13] साम्राज्ञी श्वशुरे भव साम्राज्ञी श्वश्र्वां भव.....। अथर्व. 14.1.22
[14]जायदस्तं मघबन्त्सेदु योनिस्तदित्त्वा युक्ता हरयो वहन्तु। ऋ. ३.५३.४
[15]अर्धो ह वा एष आत्मनो यज्जाया....। श.ब्रा. 5.2.1.10
[16]अयज्ञो वा एष योऽपत्नीकः...अथो अर्धो वा एष आत्मनो यत्पत्नी। तैत्तिरीय ब्राह्मण ३.३.३
[17]श. ब्रा. १.१.१.२०
[18]ऋ. १०.८५.२५
[19]जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्। अथर्व. ३.३०.२
[20] सं जनाना उप सीदन्नभिज्ञु पत्नीवन्तो नमस्यं नमस्यन्। ऋ. १.७२.५
[21]पुरुकुत्सानी हि वामदाशद्धव्येभिरिन्द्रावरुणा नभोभिः। ऋ. ४.४२.९
[22]ऋ. ८.९१.१
[23]Agni thus being witness of the nuptial ceremony, become almost symbolical of her coverture and auspiciousness, Saubhagya, and so the keeping up of the domestic fire meant life long coverture of the wife', Bhagwat Saran Upadhyaya, Women in Rigveda, pg. 141
[24]तद्ध स्मैत्पुरा। जायैव हविष्यकृत्। श. ब्रा. १.१.४.१३
[25]इह प्रिय प्रजया ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि। ऋ. १०.८५.२७
[26] जायेव योनावरं विश्वस्मै। ऋ. १.६६.३
[27]शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे। ऋ. १०.८५.४३-४४
[28] शिवराज शास्त्री, ऋग्वैदिक काल में पारिवारिक सम्बन्ध, पृ.364
[29]रामकुमार राय, वैदिक इण्डेक्स भाग-2, पृ. 473
[30] अहे दैधिषव्योदतस्तिष्ठान्यस्य सदने सीद योस्मत् पाकतरः। तैत्तिरीय-संहिता ३.२.४.४
[31] यस्मै मां पिता दान्नैवाहं तं जीवन्त हास्यामीति। श. ब्रा. ४.१.५.९
[32]इहवै स्तं मा वि योष्टं पूर्णमायुर्व्यश्नुतम्...।ऋ. १०.८५.४८१२
[33] शिवराज शास्त्री, ऋग्वैदिक काल में पारिवारिक सम्बन्ध, पृ.354

# सोमनाथ मन्दिर का भौगोलिक एवं एतिहासिक स्वरूप

✍डा.आशीष कुमार चौधरी

भारत के मानचित्र पर पश्चिम में 70⁰24ˡ5.0ˡˡ पूर्वी तथा 20⁰53ˡ16.9ˡˡ उत्तरी अक्षांश पर गुजरात राज्य के सौराष्ट्र प्रान्त वेरावलं के समीप सोमनाथ क्षेत्र का दर्शन प्राप्त होता है। सोमनाथ क्षेत्र प्राचीन काल से ही विविध बड़ालों में विविध नामों सो जाना जाता रहा है। प्रभासपाटन, देवपाटन, प्राचीनपाटन, प्रभासतीर्थ आदि इनके प्रसिद्ध नाम है, प्राचीन शिलालेख में सोमपुरा (विक्रमसम्वत 1220), हरनगर (विक्रमसम्वत 1272), शिवनगर (विक्रमसम्वत 1275), विलविलपुरपाटन (विक्रमसम्वत 1320), सुरपतन (विक्रमसम्वत 1328), सोमनाथपुर (विक्रमसम्वत 1437) ये विविध नाम प्राप्त होते हैं। प्रभास में अपनी समुद्रतटिय स्थिति के कारण समशितोला जलवायु प्रधान है। ग्रीष्मऋतु में शीतलता रहती है। प्रभाक्ष का भौगोलिक क्षेत्रफल 109 ऐकड़ है। इसके दक्षिण में समुद्र, उत्तर में कृषि भूमि और उद्यान है, पश्चिम में रेगिस्थान तथा पूर्व में खुला भू-भाग है। प्रभासपाटन, जहाँ सोमनाथ मन्दिर अवस्थित है, यह भारत के प्राचीन तीर्थ में से एक है। कच्छ, सौराष्ट्र, उत्तर गुजरात, चरोतर (मध्य गुजरात), व दक्षिण गुजरात के भूभागों की विशेषताओं ने मिलकर गुजरात को एक विशेष पहचान दी है। समग्र देश में 1600 कि.मी. का सबसे लम्बा समुद्रतट पाने का सौभाग्य गुजरात राज्य को प्राप्त है।प्राचीनकाल से ही गुजरात साहसिक व्यापारी सूरत, भरुच, खंभात, वेरावल, जामनगर, ओरवा जैसे बन्दरगाह से विश्व के अनेक देशों के साथ व्यापार करते थे।

हिमातल पर्वत से भी प्राचीन विध्यांचल पर्वत से निकलनेवाली नर्मदा गुजरात से बहती हुई समुद्र में जा मिलती है। उसे रेवा भी कहा गया है। भारत में तीन पवित्र नदियों की महिमा इस प्रकार की गई है रेवादर्शन, गंगास्नान और जमुनापान।

पौराणिक ग्रन्थों में रैवतकगिरि के नाम से प्रसिद्ध अत्यन्त प्राचीन गिरनार पर्वत जो प्रसिद्ध क्षेत्र माना जाता है वह भी इसी भूमि में है। गिरनार की तलहटि में जूनागढ़ नामक ऐतिहैसिक नगर है, जहां सम्राट अशोक का शिलालेख कितने रहस्यों को उजागर करते हुए आज भी खड़ा है। गुजरात की भूमि संतभूमि है। यहाँ सम्पूर्ण भौगोलिक स्वरुप निश्चय ही मन को मन्त्रमुग्ध करने वाला है।

भारतवर्ष के बारह ज्योतिर्लिङ्गो में आदि ज्योतिर्लिङ्ग, सेमनाथ का महात्म्य पुरातनकाल से ही प्रस्थापित हुआ है। सृष्टि के सृजनकाल से ही इस तीर्थ की स्थापना हुई ऐसी मान्यताओंने उसे आदि तीर्थ के रुप में प्रतिष्ठित किया हैं। सोमनाथ मन्दिर की महिमा करते हुए कहा गया है – शब्द में ॐ, नदी में गंगा, पर्वत में हिमाचल, मन्दिर में सोमनाथ। प्रभास और प्रभास क्षेत्र स्थित सोमनाथ एक पुराण प्रसिद्ध तीर्थ है। प्रभास का अर्थ होता है विशेष प्रकाशित। सृष्टि को प्रकाशित करनेवाला मुख्य स्त्रोत सूर्य और चन्द्र से इस क्षेत्र का विशिष्ट सम्बन्ध है। वैसे सोम का अर्थ चन्द्र होने से सोमनाथ का सम्बन्ध चन्द्र से तो है ही। पर सूर्य का भी महत्व इस क्षेत्र रहा है यह बात यहाँ के सूर्यमन्दिरों से प्रमाणित होती है। सोमनाथ एक संगमतीर्थ है। प्राचीन समय में इस क्षेत्र में हिरण्य-कपिला नकयु और वृजनी नदियों का संगम सरस्वती के साथ होता था। और पञ्चस्त्रोता सरस्वती का संगम समुद्र से होता था। इसलिए इस तीर्थ का महात्म्य और भी बढ़ गया था। इस तीर्थ के बारे में प्रथम प्रमाणभूत उल्लेख वैदिक काल में मिलता है। प्राचीन वेदग्रन्थ ऋग्वेद की एक ऋचा में भी इस क्षेत्र की महिमा को उजागर किया गया है – यत्र गंगा च यमुना यत्र प्राची सरस्वती । यत्र सोमेश्वरो देवः तत्रगाममृतं कृधि ---- इन्द्रायेन्द्रो परिस्त्रव ।।**(ऋग्वेद मण्डल – 9, खीलसूक्तम् – 7)** प्रभास क्षेत्र के महात्म्य का वर्णन विभिन्न ऐतिहासिक ग्रन्थों में विवेचन हुआ है।**अनुश्रति** कहती है चन्द्र ने दक्ष प्रजापति के शाप से सोमनाथ के शरण में आकर मुक्ति पायी और सोमनाथ मंदिर की स्थापना की। विद्वानों की मान्यता के अनुसार इस मन्दिर की स्थापना ईसा की प्रथम सदी के आसपास हुई। ईसा की प्रथम सदी के प्रारम्भ से ही एक प्रसिद्ध शैवतीर्थ के रुप में इसकी कीर्ति भारत भर में फैल गयी। शैव मतावलम्बी योगियों,

आचार्यों व पशुपतों की इस केन्द्र भूमि को ऋषिमुनियों, विद्वानों, पीड़ितों ने अपना निवासस्थान बनाया। देखते-देखते यह एक विद्याधाम बन गया। विविध विद्याओं के अध्ययन का केन्द्र बन गया।

ढ़ाई सहस्त्राब्दियों से भी ज्यादा कालखंड के दौरान उसने अनेक शासकों का शासन देखा। सत्ता परिवर्तन के चक्र को घूमते भी देखा। विभिन्न शासनों के उदय व अस्त देखें। भारत वर्ष पर सीमा पार से आयी कई जातियों ने आक्रमण किया और शासन भी किया। मौर्य शासक अशोक, ग्रीक मीनान्डर, शुंग के वसुमित्र, शक के नाहपान, क्षत्रप के रुद्रदामन, गुप्त साम्राज्य के स्कन्दगुप्त, वल्लभी सम्राट ध्रुवसेन, चावड़ा के ठाकुरों द्वारा भिन्न-भिन्न कलों में अपना अधिपत्य किया उसके बाद बौद्धधर्म का प्रभाव पूरे भारत वर्ष पर पड़ा। ई.स 770 के पश्चात् सोमनाथ की कीर्ति व समृद्धि बढ़ती रही। भारतवर्ष के विभिन्न भूभाग पर ही समयखण्ड में अनेक राजकीय गतिविधियाँ समानन्तर चलती रहीं लेकिन सोमनाथ के वैभव व किर्ति में कमी नहीं आई। परिवर्तन हुआ सीमापार आक्रमण से। सबक्तगीन तथा झाबुली नामक कनीज ने हिजरी सम्वत् 361 महोरम मास की दसवीं तारीख 2 अक्टूबर ई.971 गुरुवार के दिन जिस बच्चे को जन्म दिया वही बच्चा एक क्रूर द्रव्यलोभी आक्रमणखोर शासक महमूद गजनबी के नाम से कुख्यात हुआ। वही महमूद गजनवी जो सोलहबार भारत पर आँधी की तरह आया कहर बरसाया और सर्वनाश करके चला गया। वही महमूद गजनवी जिसने प्रसिद्ध सोमनाथ मन्दिर को खण्डित किया। बचपन से ही महमूद का शरीर सुदृढ़ व मजबूत था। बालवय में चेचक के प्रकोप से उसका चेहरा विरुप हो गया था। कुमारावस्था से वह साहसिक व निडर था। थोड़ा उद्धत भी था जिसके लिए उसके पिता ने उसे कैद की सजा भी दी थी। केवल पन्द्रह साल की किशोर वय में ही उसने अपनी शक्ति, अप्रतिम शौर्य व वीरता और वीचक्षणता का परिचय दिया। महमूद के पिता सबक्तगीन ने भी हिन्द पर कई बार आक्रम किये थे। वह हिन्दू था और उसमे इस्लाम धर्म अंगीकार किया था। यह भी एक अजीब संयोग है कि हिन्दू मूल के ही महमूद गजनवी ने हिन्दूओं के अनेक मन्दिरों को भ्रष्ट करके उनका खण्डन किया। महमूद के समय में गजनी में बसे हिन्दूओं की संख्या विशाल थी।

महमूद अत्यन्त महत्वाकांक्षी, बुद्धिमान, शक्तिशाली व विलक्षण था। बार-बार विविध प्रदेशों पर आक्रमण करके न केवल उसने भारत के विषय में विविध जानकारी ही प्राप्त कि बल्कि भारतीय शासकों की मर्यादा व मानसिकता को भी अच्छी तरह समझ लिया था। शक्तिशाली तो वह था ही। उसके पास कुशल गुप्तचर भी था। आक्रमणों के दरम्यान वह अपने गुप्तचरों द्वारा विभिन्न प्रदेशों की भौगोलिक रचना, व रास्ते, पर्वत, नदियाँ इत्यादि की जानकारी प्राप्त कर लेता और इन सबके आधार पर नये आक्रमण की योजना बनाता। प्राप्त इतिहास के अनुसार वह हिजरी सम्वत 416 के शाबान का 22 वाँ दिन था जब महमूद ने सोमनाथ खण्डन की सम्पूर्ण तैयारी के साथ गजनी छोड़ा। ई.1025, अक्टूबर माह 18 तारीख व सोमवार के दिन गजनी सोमनाथ की ओर बढ़ता चला जा रहा था। गजनी से निकलकर जब महमूद मुलतान पहुचा वह दिन रमजान मास का पन्द्रवाँ व ई.स. 1025 के 9 नवम्बर का दिन था। रामजान के शेष दिनों के लिए वही रुक गया 26 नवम्बर के दिन वह मुल्तान से सोमनाथ का ओर प्रयाण किया। लोदखा के राजा अमरसिंह, गुजरात की राजधानी पाटन में शासक श्रीदेव, गोढ़ेरा में राजपूत सेवा को परास्त्र कर ई.स.1026 जनवरी की छह तारीख बृहस्पतिवार को दूर क्षितिज पर, नील समुद्र से उठा गगनचुंबित शिखर देखा। नजदीक आकर जब उसने विशाल प्रंगण में स्थित भगवान सोमनाश का भव्य मन्दिर देखा तो स्तंभित सा हो गया। सोमनाथ पहूँचने पर भी उसे रानवधण की सेना तथा हिन्दू से भी युद्ध किया, नाकामयाबियों सो उसके चेहरे का रंग फीका पड़ गया लेकिन, अत्यन्त परिश्रम के कारण वह अन्ततः विजय प्राप्त कर उसने सोमनाथ मन्दिर में प्रवेश किया और सोना, मूल्यवान रत्नों को तथा लिङ्ग को तोड़कर सम्पूर्म मन्दिर को लूट लिया।

सोलह-सोलह बार जिस प्रदेश पर आक्रमण हुआ हो और वह बिखर न जाए ऐसा नहीं हो सकता है। महमूद ई.स.1000 से 1026 तक 26 साल में जो सर्वनाश किया उससे हिन्दू प्रजा हतप्रभ सी हो गयी। महमूद ने जब सोमनाथ पर आक्रमण किया तब उसका रक्षण करने में असफल रहे जिन राजाओं की किर्ति कलैकित हुई थी वे थे मालवपति भोज परमार, पाटणपति नीमदेव सोलंकी और सोरठनरेश रानवधण। उस समय के प्राप्य प्रशस्ति लेखों में मन्दिर के पुनर्निर्माण के यश को अपने पक्ष में बताते हुए, तानें राजाओं के अलग-अलग प्रशस्ति लेख मिले हैं।

इसलिए निश्चित रुप से निर्देशित नहीं किया जा सकता कि किसने मन्दिर की पुनः स्थापना अथवा निर्माण करवायी। महमूद के अत्याचार का प्रत्येक निशान मिटाने के भगीरथ कार्य में सब तन-मन-धन से प्रवृत्त हो गये। प्रभास क्षेत्र का गौरव पुनः स्थापित हो गया था लेकिन नियति को यह मंजुर न था निरन्तर किसी न किसी राजाओ के द्वारा सोमनाथ के मन्दिर को ध्वस्त किया जाता रहा और कालक्रम में यह विभिन्न राजाओं द्वारा उसी जगह नवनर्मित होता रहा।

**प्रथम मन्दिर (ईसा की सदी पूर्व)** – सोमनाथ मन्दिर की स्थापना सोमराजा व्दारा की गई। कुछ विद्वानों के मतानुसार सोमनाथ के प्रथम मन्दिर का निर्माण ईसा की प्रथम सदी के आसपास हुआ।

**द्वितीय मन्दिर** – भद्रकाली लेख के अनुसार दूसरा मन्दिर कृष्ण ने रजत से बनाया। भगवान श्रीकृष्ण का देहोत्सर्ग सोमनाथ की स्थापना के पूर्व हो चुका था। ईसा की छठी सदी के उत्तरार्ध में लाट प्रदेश (गुजरात का दक्षिण भूभाग) के कलचूरीवंश में पाशुपति सम्प्रदाय का अनुयायी कृष्णदेव नामक सम्राट हुआ। हो सकता है उसने सोमनाथ मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया हो जो पाशुपत सम्प्रदाय का केन्द्र था। उत्खनन में प्राप्त हुए जर्जरित ब्राह्मी लेख से पता चलता है कि दूसरे मन्दिर का निर्माण सम्राट हर्ष के पौत्र घरासेन चौथे के समयकाल (ई.स.640-646) में हुआ।

**तीसरा मन्दिर (ई.स.800-850)** – लाल पत्थरों से निर्मित तीसरे मन्दिर का निर्माण प्रतिहार – वंश के शासक नागभट्ट दूसरे ने ई.स. 815 में किया ऐसा विद्वानों का मत हैं। ई.स. 1026 में गजनवी ने जो मन्दिर खण्डित कर जलाया, वह यही तीसरा मन्दिर था। उत्खनन से प्राप्त अवशेषों ने मन्दिर को जलाये जाने की पुष्टि की है।

**चौथा मन्दिर** ( ई.स. 1030-1050) – महमूद गजनवी व्दारा खण्डित किये गए मन्दिर के नवनिर्माण का समय ग्यारहवीं सदी का मध्यकाल माना जाता हैं। नवनिर्माण का श्रेय मालवपति भोज परिवार, गूर्जर नरेश भीम सोलंकी और सोरठ के राजा रानवधण तीनों को दिया गया । ई.स. 1096 में कर्णदेव और मीनलदेवी के पुत्र सिद्धराज जयसिंह ने चौथे सोमनाथ मन्दिर के जीर्णोद्धार का निश्चय किया, जो उनके देहान्त होने पर उनके अनुगामी कुमार पाल ने पूर्ण किया।

**पाँचवाँ मन्दिर (ई.स.1169)** – सिद्धराज के अनुगामी कुमारपाल ने अपने गुरु हेमचन्द्राचार्य की आज्ञा शिरोधार्य करके अत्यन्त कलात्मक ढ़ंक से नव मंजिला शिखरबद्ध मन्दिर ता निर्माण करवाया।

ई.स. 1217 में भोला भीम के नाम से प्रसिद्ध भीमदेव (दूसरा) ने सोमनाथ मन्दिर में मेघध्वनी (मेघनाथ) मण्डप की रचना की ।

ई.स. 1300 में अलफखान के नेतृत्व में मुस्लिम सैन्य ने सोमनाथ मन्दिर को नष्ट किया। लिङ्ग के टुकड़े कर दिये और उन्हे बैलगाड़ी में ड़ाल कर दिल्ली ओर भेज दिया।

**छट्ठा मन्दिर (ई.स. 1308 )** – ई.स. में चूड़ासमा शासक महिपालदेव ने मन्दिर का निर्माण प्रारम्भ किया, जिसे उसके पूत्र राखेंगार ने पूर्ण किया और मन्दिर में ज्योतिर्लिंङ्ग की प्रतिष्ठा की। तत्पश्चात मन्दिर का पुनः – पुनः खण्डन होता रहा। खण्डन करने वाले में प्रमुख नाम मुजफ्फरखान,अहमदशाह, महमूद बेगड़ा व औरंगजेब। कण्डन के साथ-साथ मन्दिर का पुनर्निर्माण भी होता रहा। ई.स. 1706 में मन्दिर में मुस्लिम स्थापत्य अनुसार परिवर्तन करके उसे मस्जिद का रुप दिया।

अहिल्याबाई व्दारा नये मन्दिर का निर्माण (ई. 1788) – इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई ने पुराने मन्दिर के पास नये मन्दिर का निर्माण करके 1788 में ज्योतिर्लिङ्ग की प्रतिष्ठा की।

**सातवाँ शखत मन्दिर – 1947** स्वतन्त्र भारत के प्रथम गृहमन्त्री सरदार वल्ल्भभाई पटेल व्दारा 13 नवम्बर 1947 के दिन मन्दिर के पुनः निर्माण का संकल्प लिया गया और 11 मई 1951 में उससकी प्राण प्रतिष्ठा प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद व्दारा की गई।

सोमनाथ महादेव की प्राण प्रतिष्ठा का समय सुनिश्चित होने पर ई.स. 1951 में 11 मई के दिन विक्रम सम्वत 2007 और वौशाख शुक्ल पञ्चमी शुक्रवार प्रातः 9.47 के समय पर भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद जी के कर कमलों से सौमनाथ महादेव की पुनः प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। शिवलिङ्ग लगभग 5 पीट उणचा और परिघ लगभग 10 फीट हैं। प्राण प्रतिष्ठा महोत्सव ई.स. 8.5.1951 मंगलवार को प्रारम्भ हुआ। इस पवित्र अवसर पर सोमनाथजी की स्नान विविध के लिए भारतीय नदियों से तथा अन्य स्थानों से पवित्र जल से भगवान की स्नानविधि सम्पन्न हुई।

सौराष्ट्र प्रान्त से धुंती, आंझत, हिरण्या, भोगावती, कपिला, सरस्वती, शीघ्रवरदा। मध्य सौराष्ट्र से मच्छु, भादर, घेला। गोहिलवाड़ से शत्रुंजी, तलाजा, शत्रंञ्जयी, पालीनन, कालुभार। हालार प्रांत से उद , नागमति, सिन्हन, वर्तु। झालावाड़ से ब्राह्मणी, भोगावो। मुम्बई राज्य से नर्मदा, तापी, साबरमति, गोमती, सरस्वती, कृष्णा, गोदावरी, पंचगंगा, वेण्णा, कोयना, भामा, चन्द्रभागा। मद्रास राज्य से कृष्णा, पातालगंगा, कावेरी, ताम्रपर्णी, पूर्णा। पंजाब राज्य से ब्रह्मपुत्रा, तंगभद्रा, त्रिवेणी संगम, गंगोत्री, यमोत्री, सतलज संयुक्त प्रांत अयोध्या से गंगा, क्षिप्रा, सरयु मन्दाकिनी। मध्य भारत से गंडकी, चम्बल, ड़ीसा से महानदी, वैतरणी, भगवती नीला। भारत के बाहर की नदियों के भी जल वाग्मती (नेपाल),मिसिसिपी, मिसोरी, कोलोराड़ो, मेकिसको, कांगो, नाङ्ल, डाम्बु, चुकियांग, मोख्खा(रशिया), झांबोली, सीन, मिलांग, अमेझोन, ग्रंङ्डलनोट, यांगत्सी, लाप्लाटा, व्हाइन, लुनी, थुक्राटीस, थेम्स, टायग्रीस मेनाचाप्सा, जोर्डन, लोरेन्सी, मेनन, व्हाइन(पेरिस), गर्डन नील, मेकोंझ। महासागर और सरोवर के जलपुरी (उड़ीसा) भावनगर सागर, शंखोव्दार बेट, जोड़ीया, मियाणी(सौराष्ट्र), प्रनास महासागर, मानसरोवर, सुबेझ (तांबड़ समुद्र), सर्दन ओशन केपटाउन, प्रशांत महासागर, केपकामोरीन प्रशांत महासागर (चीन), अटलान्टिक महासागर, जोली(सिलोन) इत्यादि कई स्थानों से पवित्र जल से सोमनाथ महादेव का अभिषेक किया गया।

ई.स.1950 से 1995 तक पुरे 45 साल बाद यह मन्दिर समग्र निर्माण पुरा होने बाद पुनः निर्मित सोमनाथ मन्दिर ई.स. 1 दिसम्बर 1995 के दिन तत्कालिन राष्ट्रपति शंकरदयाल शर्माजी व्दारा राष्ट्र को सम्पर्तित किया गया।

**सन्दर्भ ग्रन्थ-**


1. Sharma, Dr. Kamal; Geography of India, PP-40
2. शर्मा, अशोक कुमार, भारत का भौगोलिक स्वरुप, पृ. 61
3. Gupta, Alok; History of India, Vol-2, PP-98
4. शर्मा, दीपक कुमार; भारत का इतिहास, पृ. 338
5. पटेल, अखिलेश; द्वादशज्योतिर्लिङ्ग महात्म, पृ. 118
6. Gupta, Alok; History of India, Vol-3, PP-12
8. Sharma, Dr Kamal; Geography of India, PP-93
9. द्विवेदी डॉ. कृष्ण चन्द्र; भारतीय भूगोल, पृ. 310
10. Sharma, Dr. Kamal; Geography of India PP-104
11. Gupta, Alok; History of India, Vol-2, PP-114
14. भटनागर नम्रता, भारत की नदियाँ, पृ. 116
15. Gupta, Alok; History of India, Vol-2, PP-116
16. पाण्डेय प्रवीण, गुजरात का इतिहास, पृ. 44
17. क. शिवमहापुराणम् 14/1-62
    ख. Munsi M.M.; Somnath, Chitragupt Publication, Ed. 1989, PP-114-117
18. ऋग्वेदः, मण्डलः - 9, खीलसूत्रम्-7
19. कुमार, मनीष; सोमनाथ दिग्दर्शन, विद्याप्रकाशन इलाहाबाद, सं. 1994 पृ. 84


**असि.प्रो.ज्योतिष विभाग राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान,क.जे.सोमैया.सं.वि.**

# वैदिकदेवः श्रीजगन्नाथः

✍सपन कुमार पण्डा

कोटिकैवल्यनाथस्य श्रीजगन्नाथस्य मूर्त्तिः यथा रहस्यावृत्ता तथैव तस्य तत्वमपि अतीव रहस्यमयम् । मूर्तितत्वदृष्ट्या विभिन्नैः दार्शनिकैः आलोचकैश्च भिन्नभिन्नभावेन स्वकीययारीत्या स्वस्य इष्टरुपस्य संदर्शनं कृतम् श्रीजगन्नाथस्य मूर्त्तौ। श्रीजगन्नाथस्य विग्रहे भिन्नभिन्नसंप्रदायानां , अनेकेषां देवानां ,बहूनां दर्शनानां, विविधानां तत्वानाञ्च परिस्फुटनं भवति । श्रीजगन्नाथसंस्कृतौ जातेः धर्मस्य वा न किमपि महत्वं वर्त्तते । स्वयं श्रीजगन्नाथः पूरुषोत्तमक्षेत्रे अवस्थापितोऽपि समग्रं विश्वमवलोकयति । अत्र जाति- धर्म –वर्ण- सम्प्रदायादि भेदभावो नास्ति। ब्राह्मणक्षत्रियवैस्यशूद्राणां समभावः श्रीजगन्नाथसंस्कृतौ परिलक्ष्यते । यतो हि श्रीजगन्नास्य दैनन्दिनपरिचर्यायां बहवः सेवकाः नियुक्ताः। तेषु सेवकेषु ब्राह्मणवर्णनां सेवकानां यादृशः प्रभाव तादृशः प्रभावः अन्यष्वपि विद्यते श्रीजगन्नाथसंस्कृतौ । सः धनिकः भवतु ,भवतु वा दरिद्रः उच्चवर्णः भवतु वा नीच्चवर्णः सर्वे समानाः । अत्र समाजवादस्य मूलमन्त्रः भवति ऐक्यम्। तदेव ऐक्यं श्रीजगन्नाथसंस्कृतौ दृश्यते। एतस्मात् एतत् स्पष्टियते । यत् श्रीजगन्नाथः वैदिकदेवः। सैव श्रीजगन्नाथः आदिदेवः इति प्रसिद्ध । तत्र वैदिकसंस्कृतौ परमेश्वरः निराकाररुपेण पूजितः। वैदिकऋषयः ओंकारमध्ये सकलं सृष्टितत्वं विलोक्य अग्नि –वायु-जल-सूर्य-चन्द्र-वृक्षलतादिषु परम्ब्रह्मणः सतामन्वभवन् । तदर्थं मुच्यते **"इन्द्र -मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सूपर्णो गुरुत्वाम् । एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिस्वानमाहुः"। इति (ऋ.स.१/१६४/४६)** तस्मात् श्रीजगन्नाथदेवस्य दारुरुपेणाविर्भावः वैदिकयुगात् सम्भाव्यते । एतस्मिन् विषये कानिचित् उपाख्यानानि अपि सन्ति तद्यथा – अयं श्रीजगन्नाथः मूलतः वनवासिभिः नीलमाधवरुपेण पूजित आसीत् ।ततः अवन्तीराजः इन्द्रदृम्नः स्वमन्त्रिणं विद्यापतिं संप्रेष्य श्रीजगन्नाथस्यानुसन्धानं कृतवान् । तदा शबरराजः विश्वावसुः श्रीनीलमाधवस्य पूजक आसीत् । इन्द्रदुम्नस्य तपः प्रभावात् श्रीनीलमाधवः नीलसमुद्रतीरे दारुरुपेणाविर्भूतः । ततः स्वयं विश्वकर्मा वृद्धशिल्पिरुपेणोपस्थितः । अयं वृद्धशिल्पि मूर्त्तिनिर्माणाय रुद्धद्वारविशिष्टे निर्माणगृहे स्थातुमैच्छत् ।गृहात् बहिः मूर्तिनिर्माणस्य शब्दः श्रृतः आसीत् । यदा क्रमशः सशब्दः नैव श्रृतः तदा इन्द्रदुम्नस्य पत्नी श्रीगुण्डिचादेव्याः प्रेरणया राजा इन्द्रद्युम्नः एकविंशतिदिनेभ्यः प्राक् गृहस्य द्वारमुदघाटयत् । तदा स अर्द्धनिर्मिता मूर्तिमपश्यत् तथा निर्माता वृद्धशिल्पि तत्रान्तर्हितः । एतादृशानि उपाख्यानानि जनश्रृतिमूलकानि सन्ति। अन्येकेचन वौद्धाचार्याः वौद्धधर्मस्य त्रिरत्नस्य प्रतीकरूपेण श्रीबलभद्र –सुभद्रा-जगन्नाथमूर्त्तित्रयं विराजते इति आमनन्ति । अन्ये जगन्नाथः जगन्त शब्दात् समागतः इति वदन्ति । वस्तुतः आदिरेवं श्रीजगन्नाथमधिकृत्य वैदिककालादेव चर्च्चा प्रवर्त्तते । तत्र ऋग्वेदे श्रीजगन्नाथस्य दारुविग्रहविषये सूचना प्राप्यते । तद् यथा **–अदो यद्दारुल्पवते सिन्धोः पारेअपुरुषम् तदारभस्व दुर्हणो तेन गच्छपरस्तरम् ।।(ऋगवेदे)** अत्र सायणा चार्यः मन्त्रस्यास्य व्याख्यानं प्रस्तौति –अदः विप्रकृष्टदेशे वर्त्तमानम् अपुरुषं निर्मात्रा पुरुषेण रहितं याद्दारु दारुमयं पुरुषोत्तमाख्य देवताशरीरं सिन्धोः पारे समुद्रतीरे प्लवते जलस्योपरि वर्त्तते । तत् दारु हे दुर्हणो , दुखेन हननीयः केनाऽपि हृताशक्य हे स्तोतः आरभस्व , आलम्बस्व उपास्व इत्यर्थः । तेन दारुमयेन देवेनोपास्यमानेन परस्तरं अतिशयेन तरणीयमुत्कृष्टं वैष्णवलोकं गच्छ । अपराह- हे दुर्हणो दुःखेन हननीये दुष्टहननयुक्ते वा हे अलक्ष्मि, सिन्धोः परे समुद्रतीरप्राप्तेऽपरुषं पुरुषजनैयुक्तमदोऽस्मातो दुरदेशे वर्त्तमान यद्दारु नौः प्लवते तद्दारू आरभस्व परिगृहाण । **गृहीत्वा च तेन दारुणा परस्तरमतिशयेन तरणीयं ब्रह्मणस्पतिना प्रेरितासति द्विपान्तरं गच्छ। (ऋग्वेदे-20/12/155/3पृ.841)** ।अनेन ज्ञायते श्रीजगन्नाथस्योद्भवः ऋग्वेदादेव जातः । अत्राऽयं वेशिषः यत् – ऋग्वेदस्य यस्मिन् सूक्ते मन्त्रोऽयं आयाति तत् अलक्ष्मीसूक्तम् भवति। तदाधारेण अस्य मन्त्रस्य सम्बन्धः श्रीजगन्नास्य दरुणा साकं नास्तिती आधुनिकानामाशयः । परन्तु यदि तत्वतः पश्यामः तर्हि एतत् दुर्वारं सत्यं यत् तदेव मन्त्रः श्रीजगनानाथस्य दारुमेव स्मारयति । तद्यथा अस्मिन् सूक्ते अलक्ष्मी –सागर- इन्द्र-यमलोक प्रभृतिनाम् विषयाणाम् समुल्लेखः प्राप्यते । अत्र वैदिकचिन्तनानुसारं स्वर्गात् यमलोकात् च अलक्ष्म्याः अपसाराय प्रयत्नं विद्यते । तत्र समुद्रपथि अलक्ष्मीं द्वीपान्तरं कर्त्तुमेव तेषां परिकल्पना । अस्याः परिकल्पनायाः प्रमुखः अंशः भवति समुद्रे आद्यन्तविहीनः भासमानः दारुविशेषः। अत्रैव अस्माकं प्रयाणं भवेत् । यथा अयं दारुविशेषः स्वाधीनः स्वतन्त्रश्च । नास्यलोके कश्चनाधिपतिः कोऽपिकर्ता। नैष कमपि आश्रयति। एषः सर्वतन्त्रस्वतन्त्रः। एतदेव ब्रह्मणः वैशिष्ट्यं भवति । एषः दारुविशेषः एव ब्रह्म । अस्मिन् दारुब्रह्मणि मायात्मिकायाः

अलक्ष्म्याः समन्मयः अस्मिन् मन्त्रे प्रदर्शितः । तर्हि कथमयं मन्त्रः श्रीजगन्नाथ सम्बन्धी । तत्र अपरं यत् प्रमुखं कारणं भवति यानि ब्रह्मलक्षणानि शास्त्रे चोदितानि तानि सर्वाणि अस्मिन् दारुविशेषे एव प्रतिफलितानि । यथा – ब्रह्मसूत्रे –श्रीभाष्ये ब्रह्मलक्षणमित्थं प्रतिपादितं यत् –ब्रह्मशब्देन च स्वभावतो भिरस्तनिखिलदोषोऽनवधिजातिशयासंख्येयकल्याण गुणगणः पुरुषोत्तमोऽभिधीयते । पुनः यजुर्वेदे वैश्वकर्मणहोमसन्दर्भे आयात्ययं मन्त्रः । यथा – किं स्विद्धनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः ।एतस्य उतरमायाति ब्रह्मवनं ब्रह्म स वृक्ष आसीद् इति । पुनः – यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद..... इत्यपि ब्रह्मलक्षणं तत्र दृश्यते **।तैत्तिरीयोपनिषदि** – यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते । येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयत्यभिसं- विंशन्ति । तद्धिजिज्ञासस्व तत् ब्रह्म इति । एवमेव – कठोपनिषदि यमेन नचिकेतसे ब्रह्म विषयकमुत्तरं ददता एवमुक्तम् यत् **-अशब्दमश्पर्शमरूपमव्ययं तथारसं नित्यमगन्धवच्च यत् । अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निच्चारय तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते।(कठ./1/3/15)**पुनः- **एष सर्वे वुभूतेषु गुढात्मानप्रकाशते । दृश्यते त्वग्र्यया बुद्ध्या सूक्ष्म्या सूक्ष्मदर्शिभिः ।। (कठ.1/3/12)** एवं उपरोक्तब्रह्मलक्षणे ब्रह्म अव्ययं व्ययरहितं सर्वथा निर्गुणक्रियां निर्विकारं निष्फलं निरञ्जनमिति कथितम् । यत् लक्षणम् दारुविशेषे एक प्रथितम् नान्यत्र । उपनिषत्साहित्येऽपि श्रीजगन्नाथस्य तत्वं पर्यालोचितम् । तत्र हस्तपदविहीनोऽपि गतिशीलः ग्रहीता च श्रीजगन्नाथः । यथा – **अपाणि पादो जवनो ग्रहिता पश्यत्यचक्षुः सः शृणोत्यकर्णः स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरूषं महान्तम्।(श्रेताश्रेतरोपनिषद् -3/20)** पुनः **–अपाणि पादोऽहमचिन्त्यशक्तिः पश्याम्यचक्षुश्च शृणोम्यकर्णः । अहं विजानामि विविक्तरुपो न चास्ति वेत्ता ममचित्सदाऽहम्।(कैवल्योपनिषदि-)** पुनः **– अथर्ववेदे एवं दृश्यते - आदौ यद्दारुप्ल्लवते सिन्धोर्मध्ये अपुरुषम् । तदा लभस्वदुर्दनो तेन याहि परं स्थलम् ।** पुनः मुण्डकोपनिषदि –यत् तत् अदृश्यमग्राह्यमगोत्रवर्णमचक्षुश्रोत्रं तदपाणिपादम् । नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मं तदव्ययं यत् घृतयोनिं परिपश्यन्ति धीराः । पुनः -नैव स्ती न पुमानेषः न चैवायं नपुंसकः। यत् यत् शरीरमादत्ते तेन तेन सलक्ष्यते ।एतदर्थमुच्यते पूजाकल्पे स्थूलं सूक्ष्मं परं चेति त्रिविधं ब्रह्मणो वपुः । स्थूलं रुद्रात्मकं साक्षात् सूक्ष्मं शक्त्यात्मिकापरा । परं ब्रह्मात्मक एषः ब्रह्मणः त्रिविधं वपुः। श्रीजगन्नाथादि मूर्त्तयः स्थूल –सूक्ष्म-पररूपेण रत्नसिंहासने पूज्यते । पूनः एतदपि दृश्यते माण्डुक्योपनिषदि यत् – सर्वं ह्ये तत् ब्रह्म,अयमात्माब्रह्मः । सोऽयमात्मा चतुष्पात् । इति । पुरुषोत्तमतत्त्वम् – श्रीजगन्नाथस्य अपरं नाम भवति पुरुषोत्तमः । श्रीजगन्नाथस्य श्रीजगन्नाथनाम्नः पूर्वं श्रीपुरुषोत्तमनामेति प्रसिद्धिः । वेदे पुरुषसूक्तस्य वैशिष्ट्यं सर्वे जानन्ति । तत्र विराटाख्यपुरुषात् कथं सृष्टिः समभवत तदेवालोचितम् । पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्चभाभ्यम्।(पु.सू.म.2) एतत् पुरुष तत्वं अस्माकं शास्त्रवाङ्मये प्रायशः सर्वै उररी कृतम् यथा श्रीमद्भगवतगीतायां अयं उत्तमपुरुषः इति वर्णितः। उत्तमपूरुषस्त्वन्यः परमात्मोत्युदाहृतः । पुनः - यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपिचोत्तमः ।अतोऽस्मिलोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।।(भ.गी) पुनः सांख्यदर्शनेऽपि मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्या प्रकृतिविकृतयः सप्त, षोडशकश्चविकारः न प्रकृति न विकृति पुरुषः । इत्यस्मिन् सूत्रे पुरुषतत्वस्यालोचना दृश्यते । वेदान्ते पुरुषः एव ब्रह्म । तथा ब्रह्मणः प्रकृति मायेव। इयं माया कायावत् ब्रह्मणि वर्त्तते । यदा ब्रह्मणः निराकारावस्था तथा माया- वियुक्ता भवति । यदा सृष्ट्यादि भवति तदा माया ब्रह्मयुक्ता भवति । मायायुक्तं ब्रह्म इश्वरः भवति । तदा मायायाः आवरण विक्षेपादि शक्ति द्वारा ब्रह्मणः आच्छादनं भवति। एवमेव पुरुषतत्वविषये सांख्यावेदान्तयोः नैकमतं दृश्यते । परन्तु एतत् सत्यं यत् अनेन पुरुषतत्वस्य विकाशःसाधितः। महाभारते अस्य तत्वस्यावतारणा दृश्यते । पूरणात् सदनाच्चैव ततोऽसौ पुरुषोत्तमः । एवमेव छान्दोग्ये। यथा –परं ज्योतिरुपं संपद्य स्वेन रुपेण अभिनिष्पद्यते स उत्तमः पुरुषः । विष्णुपुराणे –अंशावतारं पुरुषोत्तमस्य, ह्यनादिमध्यान्त मजस्य विष्णोः। इति वर्णितम् । एवमेव वेदे पुरुषोत्तम तत्वस्य विकाशः सम्भूय दर्शनेषु पुराणेषु तस्य पुनः विकाशः साधितः । अन्ततो गत्वा उपासनायाः सूचकरूपेण अयं पुरुषोत्तमः प्रमुखभूतः अभवत् । अनेन ज्ञायते मूलतत्वं भवति पुरुषोत्तमतत्वम् । भारतीयधर्मधारायाः प्राणभूतेऽस्मिन् वेदे श्रीजगन्नाथः सहस्रशीर्षापुरुषोरुपेण परिकल्पितः । पुरुषोत्तमतत्वेन श्रीजगन्नाथस्य परमं उत्कर्षश्चसाधितम् । पुरुषसूक्तेऽस्मिन् सर्वव्यापी – सर्वज्ञ – सर्वेन्द्रियगुणाभासरूपेण परम्ब्रह्मणः महत्वं प्रतिपादितम् । दृश्यादृश्यमानं अनन्तविश्वमेव तस्य पुरुषोत्तमस्य शरीरम् । जगतः सर्वत्र तस्यैव परिप्रकाशः । पुनः पुरुषाणां मध्ये सः उत्तमः अत सः पुरुषोत्तमः। यदि अस्य पुरुषोत्तमस्य दार्शनिकं चिन्तनं क्रियते तर्हि तत्र सन्निहितस्य गूढतत्वस्य ज्ञानं अवस्यं भवति ।

मुण्डकोपनिषदि वर्णितम् यत् – यस्मिन् विज्ञाने सर्वमेव विज्ञानं भवति । सः अवाङ्मानसगोचर पुरुषः । पुनः कठोपनिषदि अङ्गुष्ठमात्र पुरुषोत्तरात्मा सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः। प्रश्नोपनिषिदि – अरा इव रथ नाभौ कलायस्मिन् प्रतिष्ठिताः । तं वेद्यं पुरूषं वेद यथा मा वो मृत्युः परिव्यथा इति । निरुक्ते – पुरि शेति इति पुरुषः । श्रीमद् भगवद्गीतायाम् – अजोनित्यशात्वतोऽयं पुराणो । न हन्यते हन्यथाने शरीरे इति ।पुनः – यस्मात् क्षरमतीतोऽहं अक्षरारपि चोत्तमः । अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।।एवमेव पुरुषतत्वस्य क्रमशः व्यापकत्वं सिध्यति । येन श्रीपुरुषोत्तम एव श्रीजगन्नाथः इत्यवगम्यते ।

**दारुब्रह्मश्रीजगन्नाथः** – एतदेव वैदिकभावनामाधारीकृत्य पुरुषोत्तमधाम्नः तथा पुरुषोत्तम- वादस्य प्रतिष्ठा ।

पुनः – अङ्गुष्ठ मात्र पुरुषो मध्य आत्मनितिष्ठति, इशानो भूत भव्यस्य न ततो विजुगुप्सते एतद्युक्त्यनुसारं श्रीजगन्नाथविग्रहस्य गुहाकारहृदय स्थले अज्ञात, अलौकिक, अवर्णनीयः ब्रह्मपुरुषः अङ्गुष्ठ मात्रैव परिकल्पितः । पुनः पुरुषोत्तमवादे एतत् ब्रह्मपदार्थः अचिन्तनीयः । अतः एतत् वक्तुं शक्यते यत् वेद परिकल्पित निर्गुणात्मक शाङ्केत विग्रहत्त्वात् समस्तस्य मूर्त्ति रहस्यस्य सृष्टिर्भूत्वा परवर्त्तीकाले एतत् प्रतिमा तत्त्वरुपेण स्वीकृतं जातम् । अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम् । अग्नि,वायु, सूर्य एतेभ्यः सकाशात् वेदस्य परिकल्पना भवति । तथैव पुरुषोत्तम वादे ज्येष्ठभ्रातृवलदेवात् ज्योतिर्मयशैवात्मकविग्रहवादः, वायोः शक्त्यात्मकः विग्रहवादः तथा सूर्यात् लीलामयविग्रहवादस्य संचारः जातः । अतः साङ्केतवादतत्त्वे श्रीजगन्नाथः सर्वदेवचिन्तनस्य मूलाधारः । तथा समस्त मतवादं वशीकृत्वा सर्वभूतान्तरात्मारुपेण वहुधा, चतुर्द्धा, सप्तधा स्थितेऽपि एकरुपं वहुधा य करोति इति वाक्यमपि प्रतिपादयन्ति । फलतः यद्यपि श्रीजगन्नाथमन्दिरे अनेकानां प्रतिमानां दर्शनं कः करोति किन्तु अन्ततोगत्वा श्रीजगन्नाथं अथवा श्रीपुरुषोत्तमं दर्शनं कृतं इति स्वीकरोति । एतद् एव वैदिकचिन्तनस्य मुलाधारः। ब्रह्म अपरिवर्तनशीलं तथा अविनाशि भवती । सर्वेषु श्रेष्ठतमतत्वं भवति ब्रह्मतत्वम् । अत्र यद्यपि स्थूलतः दारुरुपेण श्रीजगन्नाथः विराजते तथापि तस्मिन् अव्यक्तब्रह्मतत्वस्य सूक्ष्मसत्ता वर्त्तते । ब्रह्मणः निराकारत्वं साकारत्वञ्च मायाभेदेन सिध्यति । द्वैतदृष्ट्या इदं ब्रह्म सगुणम् । अद्वैत दृष्ट्या निर्गुणं भवति । द्वैत सिद्धान्तानुसारं साकारे एव निराकारत्वारोपः । आधुनिकानाम् नये निराकारात् साकारतत्वस्य सृष्टिः । श्रीजगन्नाथस्य दारुविग्रहे उपरोक्त सत्यतायाः प्रतिपादनं भवति । श्रीजगन्नाथः भवति दारुब्रह्मणोः अपूर्वसमन्वयः । अतः भक्तानाम् कृते श्रीजगन्नाथस्य दारुविग्रहः सूक्ष्मतमादृश्यब्रह्मणः दृश्यमानः परिप्रकाशः । श्रीजगन्नाथस्य दारुविग्रहे यत् ब्रह्म संस्थापितं तदेव अक्षरपुरुषः भवति । श्रीजगन्नाथस्य यत् स्वरुपं दृश्यते तत् क्षरपुरुषः। अतः श्रीजगन्नाथः भवति क्षराक्षरयोः समन्वयात् सम्भूतः पुरुषोत्तमः । अतः पुरुषोत्तमः श्रीजगन्नाथ असीममहाकाशस्य कृष्णवर्णेन उद्भासितः । स च पुरुषोत्तमः श्रीजगन्नाथः गुणातीतः इन्द्रियातीतः पूर्णचैतन्यमयः तथा सच्चिदानन्द विग्रहश्च भवति । यतोहि सः वैदिकदेवः ।अतः लिखितम् – **स्कन्दपुराणे** – ऋग्वेदः हलिनः साक्षात् युर्जुवेद सुभद्रिका सामवेदमयं ब्रह्म पूराणो पुरुषोमहान्त्रयीत्रयी स्वरुपाय त्रयी त्रैलोक्यदुर्ल्लभम् चतुर्थं युगरुपेण चक्र अथर्वेण स्तृतः ।।इति।

**सन्दर्भ ग्रन्थ**

**स्कन्दपुराण**

**तैत्तिरीयोपनिषद**

**ऋगवेद**

**सांख्यकारिका**

**योगसूत्रम्**

**राष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठम्**
**तिरुपतिः (आ.प्र.)**

# अष्टकूट विचार कैसे प्रकार करें

✍ किरण मिश्रा

कूट आठ हैं -**(1) वर्ण (2) वश्य (3) तारा (4) योनि (5) ग्रहमैत्री (6) गण (7) भकूट (8) नाडी**

कूटों के गण मुहूर्त शास्त्रियों ने निम्न बतलाएँ हैं -

इन कूटों के गुणों का कुल योग 36 हैं।इनका सम्बन्ध राशियों तथा नक्षत्रों से है।

1- **वर्ण कूट-** मानव समाज ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य,शूद्र इन चार वर्णों में विभक्त हैं, इसी प्रकार वर्ण कूट भी ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य,शूद्र इन चार वर्णों में विभक्त हैं सदैव उच्च वर्ण में ऊँचे होने का भाव सन्निहित रहता है यथा क्षत्रिय वर्ण के मनुष्य पर यदि शूद्र वर्ण वाले मनुष्य शूद्र वर्ण वाले मनुष्य का शीघ्र दमन कर देगा। इसी प्रकार यदि कन्या उच्च वर्ण तथा ब्राह्मण या क्षत्रिय वर्ण कि हो एवं वर निम्न वर्ण अर्थात् शूद्र वर्ण का हो तो कन्या उच्च वर्ण की होने से सदा ही वर को दबाती रहेगी। इस तरह ग्रहस्थ सुख पूर्वक व्यतीत नहीं कर पाता है। वर्ण कूट का सम्बन्ध राशियों से है। बारह राशियों का वर्ण क्षत्रिय, कन्या, मकर, और वृष राशियों का वर्ण वैश्य तथा तुला, कुम्भ और मिथुन राशियों का वर्ण शूद्र है।

2- **वश्य कूट -** पत्नी पति के अधीन रहने वाली है या नहीं, इस बात का विचारवशायसे कूट किया जाता है। वास्तव मे पत्नि का पति के अधीन रहना आवश्यक है। शास्त्र के अनुसार नारी की बचपन में देखरेख पिता, यौवन में पति, वृद्धावस्था मे पति के मृत्यु के उपरान्त पुत्र करें । वास्तव में स्वतन्त्र स्त्री का अनर्थ मार्ग है। इसी से बचने के लिये एवं सुख पूर्वक दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने के लिये वश्य कूट विचार किया जाता है।

3- **तारा कूट -** इसका सम्बन्ध नक्षत्रों से है,जो नवग्रहों से भी प्रभावित शस्त्रो के अनुसार चन्द्रमा मनुष्य का मन है। चन्द्रमा तारापति भी कहलाता है। अतः जब चन्द्रमा का विचार होता है तो तारों का विचार भी आवश्यक है। कृष्णपक्ष मे जब चन्द्रमा क्षीण होता है तो तारों से ही विचार किया जाता है।

4- **योनि कुट -** स्त्री एवं पुरुष की प्रीती की जानकारी के लिये योनि कुट का विचार किया जाता है। कृष्णपक्ष मे जब चन्द्रमा क्षीण होता है तो तारों का विचार भी आवश्यक है। इसका सम्बन्ध नक्षत्रों से है। अशविनी आदि नक्षत्रों को अश्व, मेष, सर्प, स्वान, मार्जार, मृषक, गौ महिष, व्याघ्र, मृग, वानर, नकुल, सिंह योनियों में बाँटा गया है।इन योनियों में परस्पर स्वभाव मित्र उदासीन शत्रु एवं महाशत्रु के सम्बन्ध है। यथा-

**"सिंह और सिंह योनि मे परस्पर प्रेम होता है,**

**सिंह और गज योनि मे परस्पर वैर होता है। "**

5- **ग्रह कुट** - इनका सम्बन्ध राशियों से है । प्रत्येक राशि का स्वामि अर्थात ग्रहों में परस्पर स्वाभाविक रूप से मित्रता, समता, शत्रुता है । यदि वर एवं कन्या की राशियों का एक ही स्वामी हो या दोनो की राशियों स्वामी परस्पर मित्र मित्र हो तो दोनो का जीवन सुखमय एवम् मित्रवत् व्यतीत होता है। यदि राशि के स्वामियों में

परस्पर मित्र-सम तथा सम- सम हो तो जीवन समता पूर्वक बीत जाता है । दोनों राशियों के स्वामी में परस्पर सम - शत्रु ,मित्र - शत्रु एवं शत्रु - शत्रु हो तो जीवन शत्रुता पूर्वक बीतता है।

6- **गण कूट** - गण तीन हैं - (1) देव (2) मनुष्य (3) राक्षस । यदि एक गण वालों का विवाह होता है तो उसका जीवन श्रेस्कर सिद्ध होगा । यथा वार यदि ममुष्य गण एवं कन्या राक्षस गण वाली हो तो उनमें मेल नहीं रहता है । इनका सम्बन्ध नक्षत्रों से है नक्षत्रानुसार

***मनुष्य गण -*** भरणी, रोहणी, अर्द्रा, पू.फा., पू.षा., पू.भा., उ.भा., ।

**देव गण -** अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, स्वाति, अनुराधा, श्रवण, रेवती ।

***राक्षस गण -*** कृतिका, आश्लेषा, मघा, चित्रा, विशाखा, ज्येष्ठा, मूल, घनिष्ठा, शतभिषा ।

7- **भकूट -** इसे राशि कुट के नाम से जाना जाता है। वर कन्या के जन्म समय में चन्द्रमा जिस राशि में हो वे हि उनकी राशियां होती हैं । जिस प्रकार राशिपतियों अर्थात् ग्रहों में परस्पर मित्रता, शत्रुता आदि होती है। यदि वर कन्या राशि की मित्रता है तो उनका जीवन सुखमय व्यतीत होता है।

8- **नाडी कूट-** नाडी से स्पष्ट है कि इसका सम्बन्ध शरीर है । आयुर्वेद मे तीन नाडीयाँ बतलाई गई हैं-

(1) कफ (2) वात (3) पित्त ।

उसी प्रकार ज्योतिष में भी तीन नाडीयाँ बताई हैं-

(1) आद्य (2) मध्य (3) अन्त्य ।

यदि वर एवं कन्या दोनों की मध्य नाडी तो पित्त का आधिक्य हो जाएगा । यदि वर एवं कन्या की अन्त्य नाडी हो तो कफ का आधिपत्य होगा तो दोनों की मृत्यु कर देगा ।

नाडी का सम्बन्ध नक्षत्रों से है । तीन नाडीयों को अश्विनी आदि नक्षत्रों में विभक्त कर दिया गया है -

आद्य नाडी - अश्विनी, आर्द्रा, पुनर्वसु, उ.फा, हस्त, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, पू.भा.।

मध्य नाडी - भरणी, मृगशिरा, पुष्य, चित्रा, अनुराधा, पू.फा., पू.षा., घनिष्ठा, उ.भा.,।

अन्त्य नाडी -रोहणी, कृतिका, आश्लेषा, मघा, विशाखा, श्रवण, रेवती ।

# समकालीन कविता में स्त्री चिन्तन

✍ डा. गीता दुबे

कवि को ब्रह्मा कहा जाता है। जैसे ब्रह्मा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की सृष्टि करते हैं, उसी तरह कवि भी रचना जगत की सृष्टि करता है। इस रचना जगत में कुछ ऐसी विलक्षणताएं होती हैं, जिसके कारण समालोचकों को यह कहना पडता है -जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि। महर्षि वाल्मीकी के युग से लेकर आज तक यह कविता मन्दाकिनी निरवच्छिन्न भाव से बहती आ रही है, और हमारा पूरा समाज इसमें गोते लगाता रहा है। कविता की इस महान् परम्परा को समीक्षा सौविध्य के लिए अनेक खण्डों में विभाजित किया जाता है, जिसमें एक खण्ड का नाम समकालीन कविता है।

मैं समकालीन कविता को कुछ इस रूप में देखती हूँ कि कवि जब कविता की रचना कर रहा होता है, कवि की अन्तरिन्द्रियों एवं बाह्य इन्द्रियों को जो सामाजिक घटनाएं झकझोर रही होती हैं, कवि के हृदय एवं नाडियो का जैसा स्पन्दन चल रहा होता है, उन्हीं सबका परिणाम जब कविता के रूप में परिणत होता है, तो वह समकालीन कविता शब्द प्रयोग की दृष्टि से कहलाने के लिए हकदार होती है। किन्तु अर्थ दृष्टि से जिस युग में हम लोग जी रहे हैं, जिस आसमान में हम सब सांस ले रहे हैं, वहाँ की जो उपलब्ध कविताएं हैं वही समकालीन कविताएं होती हैं। इन कविताओं के अनन्त एवं असंख्य विषय होते हैं परन्तु एक नारी होने के नाते मैं कुछ समकालीन कविताओं में उलझती हुई, विहुंसती हुई, विलखती हुई एवं समाज के सामने एक आदर्श उपस्थित करते हुए नारी को ढूँढने का प्रयास अपने शोध पत्र में कर रही हूँ।

कवयित्री ममता कालिया की **खाटी घरेलू औरत** कवि विश्वनाथ तिवारी की **फिर भी कुछ बचा रहेगा** एवं कवयित्री सुनीता जैन की **चौखट पर** व **उठो माधवी** की कुछ कविताओं के माध्यम से नारी की यथास्थिति से रूबरू होने का एक छोटा प्रयास है।आज हम 21 वीं सदी में आ गये हैं। इस दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि, मात्र कुछ स्त्रियों के जीवन स्थिति में बदलाव आया है बाकी कुछ मजबूर औरतें आज भी अपने अस्तित्व की तलाश कर रही हैं। स्त्री का सम्मान घर से शुरू होता है किन्तु यह सौभाग्य बहुत कम को ही मिल पाता है। पुरुष प्रधान समाज होने के कारण उसे अनेक प्रकार की वर्जनाओं का सामना करना पडता है। हमारा सामाजिक ढांचा ही ऐसा है कि सम्मानजनक एवं स्वतन्त्र अस्तित्व के लिए सतत संघर्ष करती दृष्टिगत होती है। खाँटी घरेलू औरत की समस्याओं एवं उसके उत्पीड़न को ममता कालिया ने बड़े कौशल के साथ चित्रित किया है। खाँटी घरेलू औरत को घर के बैठक में स्थान नहीं है रसोई में रखी तिपाई पर यदि उसे नींद आ जाती है तो घर का मालिक डाँटना शुरू कर देता है। सवेरे के आलस्य में जब घर के लोग नींद ले रहे होते हैं तो, वह घरेलू औरत घर के सभी काम समेट लेना चाहती है,पानी भरने नल पर जाती है, उसे बिजली का पड़ा हुआ तार रस्सी नजर आता है, और वह उससे चिपक जाती है, चिल्लाने पर एक व्यक्ति उसे बचाता है, और स्वयं मौत के मुँह में चला जाता है, होश आने पर वह सहमी सी घर आती है, घर पर सहानुभूति प्रकट करना तो दूर उसके ऊपर अनेक प्रकार के लांछन लगाये जाते हैं। पति ने क्या कहा इन पंक्तियों में प्रकट है -

पति का भेजा, चाय न मिलने से तन्नाया,
वह भन्नाया
सुबह-सुबह नलके पर जाकर
करती है तू रोज छिनाला...
लात और घूंसों से उसकी हुई पिटाई।

यह चरित्रहीनता का आरोप एक स्त्री के जीवन को हिला कर रख देता है किन्तु पुरुष पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह पितृसत्तात्मक परम्पराओं की आदी हो गयी है जिस दिन विरोध जताई उस दिन आदर्शनारी से पदच्युत हो जायेगी। बार-बार आहत होने पर जब अपनी खोई प्रतिभा वापस लाना चाहती है और अपने कार्य में सफल हो जाती है तो पुरुष उसकी कामयाबी में अपनी भूमिका किस तरह महत्त्वपूर्ण बताता है -

यह बिलकुल कोरी आई थी
कस्बे की छोरी आई थी
मैंने इसे जतन जागर से गढ़ा, पढ़ाया,योग्य बनाया...
अभिनव नारी का अभियन्ता।

प्रायः कहा जाता है कि एक कामयाब पुरुष के पीछे एक महिला का हाथ होता है, ठीक वैसे ही मान लेना पड़ता है - कि एक कामयाब औरत के पीछे पुरुष का हाथ होता है और वह घरेलू औरत पुनः बनने लगती है। शादी से पहले पिता के घर में

लड़की चाहे कितनी लायक हो किन्तु शादी के बाद उसकी सारी प्रतिभा लुप्त हो जाती है । बेवाक बोलने वाली लड़की शादी के बाद कुछ भी माता-पिता से कहते सौ बार सोचती है । ससुराल के सभी रिश्ते निभाते-निभाते उसे अपने विषय में सोचने के लिए समय ही नहीं होता है वह हर समझौते करती है जिससे गृहस्थी अच्छे से चलती रहे ।कड़वाहट भरी जिन्दगी जीते-जीते कभी-कभी उसके मन में स्वयं को बदलने की भावना भी उठती है, किन्तु धनाभाव एवं समयाभाव के कारण धीरे-धीरे ये भावना शांत हो जाती है । घरेलू औरत अपना दुःख दर्द भी बताने से बचती है उसे लगता है कि शायद सुनने वाला कोई नहीं है । खाँटी घरेलू औरत की आँखों में कोई सपना नहीं रह जाता है । उसके जीवन में विश्राम भी नहीं होता उसका दिन काम में एवं रात्रि उधेड़बुन में निकल जाती है । आराम के लिए एवं मनोरंजन के लिए कोई समय नहीं होता है । किस प्रकार पूरा सप्ताह व्रत पूजा पाठ में बीत जाता है कवयित्री ने अच्छा वर्णन किया है । सबको घर से काम पर भेजने वाली घरेलू औरत जब आराम कुर्सी का आनंद लेते हुए अखबार पढ़ने का समय निकालती है तो वहाँ भी खबरों के बाद गृहस्थी में भविष्य में काम आने वाली चीजों को प्रमुखता से देखती है । ममता जी घर और बाहर दोनों जगह उसकी कार्य कुशलता देखकर एक नटी की संज्ञा देती हैं ।

पति के लिए समर्पण भाव रखने वाली स्त्री सदैव समर्पित दिखाई देती है पति के विमुख होने एवं विश्वासघात होने पर भी वह पति के सुधरने का इन्तजार करती है । आदर्श, शील एवं नैतिकता से युक्त जीवन जीते-2 उसके अन्दर तनाव,डर आदि घर कर लेते हैं इस प्रकार जीवन समाप्ति पर नजर आने लगता है । ठीक ही कहा गया है कि विवाह के बाद नारी का दूसरा जन्म होता है । जब कभी बेटी जीवन से हताश होकर पिता के पास पहुँचती है और अपनी समस्या से अवगत कराती है तो पिता के ये शब्द सभी बेटियों के लिए प्रेरणास्पद हैं-

मैं क्या मानूं
मैंने पलायनवादी, दब्बू दुबकी,
चुप चीटी को जन्म दिया है .....
रवि तुम्हारा है ।
तुम नहीं हो देवि, जो सन्तुष्ट सब जन हो ।

कवयित्री आह्वान करती हैं कि स्त्री आंसू बहाने न बैठकर अपनी शक्ति को पहचाने । कर्तव्य निभाते हुए अपने सम्मान के प्रति जागरूक रहें और एक दिन पति पहुँचे घर कविता में जागरूक स्त्री की तस्वीर देखी जा सकती है ।

एक दिन पति पहुँचे घर
थाली पीट-पीटकर माँग रही हैं वे.....
पच्चीस साल का वेतन, ओवर टाइम और बोनस ।

इस प्रकार 'आज नहीं मैं कल बोलूंगी' पैंतीस साल मैंने घर' लोग कहते हैं' आदि कविताओं के माध्यम से स्त्रियों की आवाज बुलन्द की गयी है । गृहस्थी में कुशल पैतृक संस्कारों से युक्त अपने दुःखों को अपनों से छिपाते तिल-तिल समाप्त होते देख कवयित्री उसकी खूबियों को पहचानकर उद्वेलित होती हैं और वह उन्हें जागृत करने की कोशिश कर रही है । भारतीय मूल्यवादी दृष्टि में आस्था रखने वाले विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ऐसे कवि हैं जिनमें यथार्थ और सादगी के बीच अनुभव की गहनता दृष्टिगत होती है । ममता जी की तरह तिवारी जी ने भी स्त्री की दयनीय स्थिति देखते हुए उसके विभिन्न रूपों को विविध सन्दर्भों में प्रस्तुत किया है । ' स्त्री की तीर्थयात्रा ' कविता में कवि ने एक स्त्री की दुनियां को बड़ी अच्छी तरह पहचानते हुए सुबह बिस्तर छोड़ने से लेकर शाम को बिस्तर पर जाने के बीच के क्रियाकलापों का बहुत ही यथार्थ वर्णन किया है । स्त्री के सुबह के कार्यों के विषय में कवि कहता है -

सवेरे-सवेरे
उसने साफ किये
घर-भर के जूठे बर्तन.....
सबके लिए बनाई चाय ।

सुबह का काम समेटने के बाद भगवान की पूजा के लिए समय निकालती है किन्तु पूजा को बीच में ही छोड़कर उठना पड़ता है क्योंकि छोटा बच्चा रोने लगा । वह अपने को हर परिस्थिति में ढालने का प्रयास करती है । उसका जीवन घर के लोगों के लिए समर्पित है उसकी जिन्दगी में आराम के लिए कोई जगह नहीं है । दोपहर का भोजन समाप्ति पर था कि उसी समय एक मेहमान का आगमन होता है वह घर की स्त्री जो सिर्फ सेविका है दाल में पानी मिलाकर अतिथि सत्कार किया और स्वयं

चटनी रोटी खाती है। इसके बाद स्कूल से मुरझाई बेटी का आगमन हो जाता है इसके बाद शाम की रसोई में जुट जाती है। इस तरह की स्थिति अधिकतर स्त्रियों के जीवन में आती रहती है। सब के प्रति समर्पित स्त्री को खाना सबके खाने के बाद नसीब होता है जिसमें सब्जी आदि कुछ भी उसकी पसन्द का नहीं होता। वह इस जीवन से खुश नहीं है वह जी नहीं बल्कि रो रही है। कवि की निम्न पंक्तियों से इसका परिचय मिल जाता है -

बिस्तर पर गिरने से पहले
वह अकेले में थोड़ी देर रोई
अपने स्वर्गीय बाबा की याद में।

इससे पता चलता है कि वह मायके में खुश थी ससुराल की जिन्दगी से वह खुश नहीं है। स्त्रियों की स्थिति में बदलाव तो आया है किन्तु उतना नहीं जितना होना चाहिए। भय कविता में भयभीत एक ऐसी स्त्री को चित्रित किया है जो अपने गोद में लिए लाल के सहारे सब मुसीबत झेलने के लिए तैयार है-

विदा हो रही है स्त्री
सड़क किनारे
पीपल के नीचे जमा है कुछ स्त्रियां
जो बस में चढ़ा देती हैं उसे
लाल आँचल में लिपटा
अबोध शिशु है उसकी गोद में....
गो कि फर्म है पुरुष -स्त्री के आँसुओं में।

स्त्री को तरह-तरह के विज्ञापन करते स्वयं स्त्री के पास कुछ न बच पाने के लिए चिन्तित है। इसी प्रकार मजबूर एवं असुरक्षित स्त्री की चिन्ता भी कवि को सताती है। ' स्त्री विहीन रेल का डिब्बा ' कविता में स्त्री - पुरुष के अनुपात में आ रहे असन्तुलन पर कवि चिन्तित है। बेटी की वास्तविक जिंदगी शादी के बाद शुरू होती है। मायके से उसका पूरा सम्बन्ध टूट जाता है। माता-पिता की साँसों में भले वह स्थित रहे पर वास्तविकता यही है। बेटी के विवाह में खुशी का वातावरण होता है ऐसे समय में भी भयभीत बेटी के पिता के दर्द को इन शब्दों में कवि ने व्यक्त किया है-

हाथ काँप रहे तुम्हारे, पिता
काँप रही थाली
गंगा में आ गई बाढ़, माँ तुम्हारे आंसुओं से
बारात सजी है दरवाजे
पगड़ी बाँधे खड़े हैं बाराती।

स्त्री की स्थिति पर कवि ने बड़ी संवेदना एवं सहानुभूति के साथ अपने भावों को व्यक्त किया है। स्त्री की दयनीय हालत, विषमता, साम्प्रदायिकता एवं दहशत भरे माहौल से अवगत कराते ' फिर भी कुछ बचा रहेगा ' कविता के माध्यम से उसे बचाने की अपील करते देख सकते हैं ।

जीवन की भागम भाग में इन्सान में रिशतों की गरमाहट बचाने तथा मानवीय मूल्यों का समर्थन करती सुनीता जैन की कुछ कविताएं मानवता का आधार स्तम्भ कही जा सकती है। ये कविताएं इन्सान को एक नयी सोच एवं दिशा देती प्रतीत होती हैं। तह में कविता में माँ से उसकी पूंजी लेने वाले बच्चों के पास इतना समय नहीं है कि वे सब ये जानने की कोशिश करें कि माँ ने यह सब कैसे जमा किया। बुरे वक्त पर काम आने के लिए छिपाकर रखा था। किन्तु अपनी इच्छा के विपरीत बेटों की जरूरतों को के लिए देती है ऐसी माँ के उस काम को बच्चे भूलते नजर आते हैं जिससे माँ सहम सी जाती है उसे ठेस पहुँचती है। इस प्रकार यदि देखा जाय तो हमारे समाज में स्त्रियों की स्थिति कभी भी बहुत अच्छी नहीं रही है। वृद्धावस्था में तो स्त्री-पुरुष दोनों की स्थिति शोचनीय हो जाती है। वृद्धावस्था में बेटे बहू का सहारा नहीं है और कोई भी उसकी जिम्मेदारी उठाने के लिए तैयार नहीं है। अंधेरी होती शाम और अपनों से दूर अकेले तड़पती वृद्ध स्त्री का सुनीता जैन ने कटु सत्य एवं मर्मस्पर्शी पंक्तियों में वर्णन किया है। उन पंक्तियों को देखकर हठात् गुप्त जी की पंक्ति याद आ जाती है- नारी जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी...। एकदम अकेली, शांत एवं द्रवित स्त्री की स्थिति से परिचय कराते हुए कवयित्री कहती है कि वह किस प्रकार अपने अतीत और वर्तमान को स्मरण करते जीवन को बिता रही है। जो कभी पूरे घर का भरण-पोषण करती थी आज वह कितनी अकेली और मजबूर है। अकेलेपन से जूझती हुई स्त्री का हृदयस्पर्शी वर्णन इस प्रकार किया है - तब/एक-एक कर/याद आते हैं-/नहीं, पास आते हैं/ दिवंगत माँ/बहन छोटी/परदेस बसा बेटा,बेटी/ ।[11] परदेस के नाम पर मुझे

त्रिलोचन की वह कविता याद आती है जिसका नाम है - चम्पा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती चम्पा पढ़ी लिखी नहीं है और न ही उसे पढ़ना लिखना पसन्द है उसे लगता है कि जो पढ़ते हैं वे बाद में गाँव छोड़कर चले जाते हैं । वह अनपढ़ लड़की पलायन के खिलाफ है । लोगों की जीवन शैली में आये परिवर्तन के कारण आत्मीयता का अभाव होने, अकेले एकाकीपन और घुटन के कारण जीवन को नीरस होते देखकर कवयित्री सुनीता जैन आत्मीयता अपने पन आदि भावों को जीवित रखना चाहती है । क्योंकि यही वास्तविक जीवन है । पिता, भिक्षुक, संन्यासी, राजा द्वारा नारी से वस्तु बना दी गयी माधवी इसका उदाहरण है । ऐसी माधवी जिसमें जीवन को पीड़ा व्यथा से भरते देख बड़ी आत्मीयता से माधवी की व्यथा को कम करने के लिए सीता, उर्मिला, अनुसूया, कुन्ती,सावित्री की याद दिलाती हैं, और माधवी के आत्मबल की प्रशंसा करती हैं । नारी सम्बन्धी चिन्तन को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली यह कविता गवाह है स्त्री संसार के उत्पीड़न एवं दुःख भरती हुई दुनियां की और पाठक वर्ग को सोचने एवं समझने के लिए बेचैन एवं विवश अवश्य करती है । निर्मला पुतुल का काव्य संग्रह **नगाड़े की तरह बजते शब्द** की कविताएं स्त्री विमर्श की दिशा में एक सार्थक पहल है इसकी चर्चा फिर कभी होगी ।

इस प्रकार कुछ समकालीन अल्प कवितओं के माध्यम से मैंने स्त्री सम्बन्धी चिन्तन को सामने रखने का अल्प प्रयास किया है , अभी उसके विषय में बहुत कुछ बाकी है । इस यात्रा से यही तथ्य सामने आया है कि खाना बनाना घर की देखभाल करना, परिवार के बच्चों बूढ़ों की सेवा करना स्त्री का ही काम है चाहे वह खेती करे, मजदूरी करे, टीचर हो डॉक्टर हो, कॉरपोरेट में हो बच्चे की देखरेख स्त्री का काम है । औरत पिता, पति और पुत्र की सम्पत्ति है । इन सबके बीच मैं कहना चाहूँगी कि **यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता** कथन यूं ही नहीं कहा गया होगा इस पर विचार करना चाहिए । अभी स्त्री विमर्श में बहुत कुछ बाकी है । स्त्रियाँ भी अपने दायित्वों को निभाते हुए स्वयं को समझने की कोशिश करें । स्त्री पुरुष के सामूहिक प्रयास से हर समस्या का समाधान सम्भव है ।

## सन्दर्भग्रन्थसूची -


1. ममता कालिया ' खाँटी घरेलू औरत', पृष्ठ-52.
2. ममता कालिया ' खाँटी घरेलू औरत', पृष्ठ-60-61.
3. ममता कालिया ' खाँटी घरेलू औरत', पृष्ठ-45.
4. ममता कालिया ' खाँटी घरेलू औरत', पृष्ठ-80.
5. ममता कालिया ' खाँटी घरेलू औरत' , पृष्ठ-64.
6. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ' फिर भी कुछ बचा रहेगा ' पृष्ठ-57.
7. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ' फिर भी कुछ बचा रहेगा ' पृष्ठ-58.
8. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ' फिर भी कुछ बचा रहेगा ' पृष्ठ-25.
9. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ' फिर भी कुछ बचा रहेगा ' पृष्ठ-56.
10. सुनीता जैन ' चौखट पर व उठो माधवी ' , पृष्ठ- 12.
11. सुनीता जैन ' चौखट पर व उठो माधवी ' , पृष्ठ- 23.
12. नयी सदी की हिन्दी - कविता - डॉ.राधा वर्मा ।

# The Ideals in Vedic Education

✍**Dr. Prem Singh Sikarwar**

There are ten Sutras in Atharva Veda on this topic usually known as Brahmachrya. Normally bramacharya is transferred as celibacy, but its literal meaning is 'To move in Brahma' to move towards the supreme state of consciousness name as Brahman. Typically it signifies the comprehensive education received by a young person in vedic times before he married and led the family life. The education includes not only the study of the various subjects but also the spiritual initiation or development of intuition (diksa) by special methods. Diksa even today is an important aspect of spiritual life. It is a way of integration the knowledge, not a mere rite or ritual.

**Need for this study -**

The principles underlying the practice of education in Vedic times are very much relevant for us today, if we are interested in developing creativity in all fields of endeavour. In recent time we have been preoccupied with political and economic issues, looking for motivation in all sorts of alien models like the Maxian whose cruelty and bankruptcy all over the world are well documented. Sri Aurobindo posed the question, "What was the secret of that gigantic intellectuality, spirituality and superhuman moral force which we see pulsating in Ramayana, Mahabharata, in the ancient philosophy, in the superme poetry, art, sculpture and architecture of India. " or "What was at the basis of the incomparable public works and engineering achievement, the opulent and exquisite industries, the great triumphs of science, scholarship, jurisprudence, logic and metaphysics?...[1] (The Brain of India,p.9).For the persons who feel for various reasons that the creativity of ancient Hindus is exaggerated, I will focus on only one field, namely mathematics which is honoured in India today. An example related to sculpture and architecture is in chapter 5.

**Initiation(Diskha)-**

A good teacher simply does not give only facts to a students. By his enthusiasm and personality, he ignites in her/him a thirst for learning and understanding. Thus the process of teaching is really not a mechanical one, but an occult or hidden procedure which cannot be physically replicated.The hymn[2] (11.5) is the earliest attempt to describe the process of initiation (diksha) by a teacher (guru). Modern spiritual biographies like 'The Gospel of Sri Ramakrsna' describe this process in some detail .This hymn metaphorically describes the Rsis as keeping the discipline in his Womb for three nights, impart power to him and make him grow. This procedure is represented symbolically even today in the ceremony of sacred thread (Upayayanam) by enclosing the disciple and the teacher by a single cloth and the teacher giving the mantra to the disciple in his ear.

'The Aacharya initiating him, takes the Brahmacharin within as a mother the child ;Three nights he carries him like a mother Bearing the child in her womb, And to see him when born, devas come in body.'[3](11.5.3) No wonder the spiritual initiation is called as a second birth for the student. The conclusion of the brahmacharin's study is described in [4](11.5.24), in 24th verse of same sukta.

The brahmacharin bears the radiant Brahman, Where in all devas are woven (Samota) together,Creating in breath (prana), out-breath(apana), the pervading breath (vyana).Word (vacam),

mind (manas), heart (hrdayam), Sacred knowledge and wisdom (brahma)."We see here the earliest occurrence of the words prana, apana, vyana in the Indian tradition. Another hymn[5] (6.133) of five verses describes the power of girdle of brahmacharin ,(Mekhala). It is not of course, the physical cord but the enveloping power. So it is said to give tapas, vigour and intelligence.

**Principles Behind Vedic Education -**

We can discern the principles studying all the hymn is some detail. The Vedic education is usually called brahmacharya. It is a mistake to translate brahmacharya as celibacy. Celibacy is only one aspect of brahmacharya. Brahma in the veda means mantra or the potent word which is the basis of knowledge. Knowledge includes both theory and practice. We will give the eight principles The cosmic powers are eager to pour their energies into the human beings. Sri Aurobindo explains the operation very well,'Man is a dynamo for the cosmic work,Nature does the most in him,God the high rest, Only his soul's acceptance in his own.'[6](Savitri, Bk.7, canto 6)

1. A physical foundation or a foundation of matter is necessary for receiving and developing the non material forces. For instance, to utilise the descending memory power, the brain should have the necessary brain cells. To receive mental power, it should have the mental apparatus of the brain. The physical part has to work with its associated non-physical energies.

2. Practice of Brahmacharya involves at least three tasks :-(a)Learning how to allow the energies like Agni or Divine Will to manifest in our body.(b)Continuously striving to increase in his/her capacities to hold these energies step by step.(c)Expelling the obstructions in our bodies for the manifestation of these energies.

3. Celebacy in only one aspect of Brahmacharya. Some of greatest Rsis were married. Retas is the essence of the energy given to a human being in a material form. The retas is involved in a hidden manner leading to tejas, the heat, light and electricity in man. This energy may be either expanded physically or it can be conserved. On the other hand, all self-control conserves the energy in the retas, conservation and the associated practices lead it to increase in range and power. This supreme consummation is mentioned in [7](11.5.1, 11.5.7 ) when the student (brahmachari) is said to equal the Gods and support heaven and earth.(Adapted from Sri Aurobindo).

4. Veda states that nothing can be really taught from outside. Each one of us is born with some specific talents which are in latent form. For each one, there is a self- law (svadha) which upholds the human being and his/her specific talents. Education or Brahmacharya can only develop them and allow them to blossom.Taittiriya upanisad[8] (1.3) declares that, 'the master is the first form; the disciple is the letter form; knowledge (vidya) is the linking; the operation of the link is exposition (pravacna).

5. Hence the same type of training cannot benefit all students. In the times of Vedas, all the students in the same Ashrama under the same teacher living similar outward lives progressed spiritually in different degrees and in different directions. For instance take the students who became craftsmen such as chariot makers, house builders or merchants. They received the basic education about the power of various deities like Savitr, Rbhus etc, and their methods of the receiving these powers. They learnt about the powers of concentration (tapas), intuition (diksha),

the collaborative activities with the Gods(yajna) and the power of the word(brahma). They used the powers applicable for them in the specific craft or vocation.

6. Education is continuous process. It is lifetime activity. This was recognised by the Vedic sages. The Upanisad period, which is dated 500 or 1000 years later then the Vedic period has preserved the Vedic modes of education. Taittiriya Upanisad belonging too the Krishna Yajur Veda focus on the topic in the first book out of its 4 books. Taittiriya Upanisad [9](1.9) declares that a person should study (svadhyaya) and teach (pravachana) all his/her life. This study and teaching activity is equated with developing the qualities of self-mastery(dama), attaining peace of soul(sama), performing sacred rites like Agnihotra and offering hospitality to guests.

7. The students experience the joy or delight (ananda) pervading the teaching and learning process.[10](11.8.24) lists several types of ananda such as ananda (delight), moda (joy), prammuda (estasy), hasa (laughter), narista (sports) and nrttyani (dance). TattiriyaUpanisad [11](2.8)

**Valedictory Address** –The first book of Tittiriya Upanisad deals with the elements of Vedic education. Its concluding chapter is the valedictory address given by the teacher to his students. Some of its highlights are; -

- Speak truth, walk the way of truth, neglect not the study and the teaching of Veda.
- Bring thy master the wealth he desires.
- Do not be negligent to thy increase and thriving.
- Regard your parents and your guests who is a stranger as Gods.
- .You should do with diligence only those works which are blameless.etc

There were some ascetics or wandering monks called as vratya in the Vedic age; but the ideal of external renunciation i.e., giving up the home and leading a wandering life is not mentioned. The close connection between developing spiritual powers and leading the life external renunciation is Buddhist and post –Buddhist development.

**References :-**


1. Prof. A.P.Pandey, "The Values and Ideals of Vedic Education," Maharishi Sandipani Rashtriya Vedavidya pratisthana, Uajjin,(M.P.)-456010
2. Dr. Mithlesh Kumar, "Upanisadkaleen shiksha" ,Janki Prakashana ,New Delhi -110002.
3. Dr. Kapildev Dvivedi "Vedon me Samajshastra, Arathashastra or Shikshashastra" Vishavbharti Anushndhan Parisad" Gyanpur, Bhadoi (U.P.)-221304
4. K.N.Joshi ,V.P.Mishra, " Sanskritkaveysu Vedicchintansyay Prabhavah"Pratibha Prakashanam , Delhi-110007
5. Kulbir Singh Sidhu, Mathodology of Research in Education,Sterling publishers Pvt. Ltd., New Delhi,2002
6. M. Narayan Murty, Mathodology in Ideological Research ,Bharatiya Vidya Prakashan, Varanasi, 1991
7. Prof. S. M. Katre, Sanskrit Translation of an introduction to Indian text,R.s. Vidyapeetham ,,Tirupati,2002


**Ast. Prof.(Edu) . r.s.s, jammu**

# ENGLISH – A GLOBAL LANGUAGE IN A MULTILINGUAL COUNTRY

✍Dr. Leena Tiwari

English is in india today syomble of people for aspiration for quality education and a fature ion participation in national and international life . linguistically,the current status of engilish stems for its overwhelming presence on the world stage and the reflection of this national arena. English has become a world language rather than a language of only the English speaking countries such as the UK and the USA because the number of the people who use English as mean of communication exceeds much more than the number of the people who use speak it as their mother tounge . In case of English in indian, more than two centuries indian has been directly and indirectly had influence of the language English , on all the fields such as education medical science etc.Text materials relating to the subject of science , engineering and technology as also medicines are available only in English.

**Factors affecting teaching Engilish in india-**

There are many fector that effect the teaching learning process in india. The student in india can be categorized into, the one is having the regional language as meadium of study from the primary leval and other is having English as medium of study. Hence the problem of teaching English as a second language, to the indian stdents starts from the pre-schooling, further environment and family bacakground play vital role in success of learning process. For instance countries like indian where majority of people are framers have the poor background in education.

Secondly,the infrastructure,viz school building, class room, labs etc is not adequate as required . The first cetegories of the students are almost complelled to attend their classes under the threes even after sevral five year plans.

Majority of the students are comeing from village and also their parents are farmers and uneducated. If the nature fails the survival of the farmers will be questionable. Hence the are mentally discouraged due to family conditions.

In second category the students are heaving enough background in basic education since their parents are educated since their parents are educated they donot depend on nature much. Many of the students from second category are joining in English medium school and hence they donot find much difficulty in pursuing their higher education. Moreover the majority of the families of second category are dwelling in towns and cities and hence, they have easy access of quality education.The only thing is that have to be given training in oral English communication also. A common program for English language teaching must be framed in the pre schooling itself. Some possibillites are here ---

Removing the barriers between languages and subject in the primary school. At the lower primary stage or at in classes 1st to 3rd English can occur tandem with the first language. For learning activities designed to create the awareness of the world around the child. Materials need to be designed to promote such multilingual activity and clear methodological guidelines need to be worked out in copretion with teachers to see how more than one language can be naturally used linguistic purism, whether of code switching and code mixin if necessary.

Using the know language for the construction of meaning of the attempted epression through imperfect english , in consultation with the learner.

While the suggesttions above see the language working in tandem or in parallel, there is also experimental work available on bilingual or mixed code texts of teaching reading.

Yet another bilingual education model is to have inputs in foregien language with educational model is to have inputs in foreign language with production in a familiar language, sometimes reflected in ademand by (English Medium) university students for writing their answers in own language.etc

Conclusion—

Eventully in our country, as alreay said 75% of the students from rural areas and they coming through regional language medium schools. Hence, based on their background, we have design the syllabus and adopt methods to test their English language profiency.Therefore it is necessary to go for a detailed discussion as to whether the existing curriculum is fulfilling the need of the hour and suitable to the students in achieving their goals, the present methods for teasting the profiency of the student are suitable and opinion and suggestion from the teaching faculties of english language in technical institution are to be obtained.

## References-

Techers of English to speakers of language(1997).esl standards for pre k-12students. Alexanria,V.Aauthor.

Aspects of Enlish language , Igno study material, New delhi.

Sharma.R.A, teaching English,kala mandir prakasan, New Delhi 2010.

Ugc English language Net examination book, DOABA publication, 2013.

Murli,M, Teaching English as a second in india-review Mjal, vol1.1.

**Ast. Prof.(Edu) . r.s.s,jaipur**

# ROLE OF YOGA EXERCISE IN PHYSICAL FITNESS

✍**Shankar Baburao Aandhale**

**ABSTRACT**

[We see the importance of the Yoga Exercise practice throughout the world which has been introduced for the first time by the sage Patanjali many a centuries ago. Shri Shankar Baburao Andhale brings the importance of yoga in this valuable article. A growing body of research evidence supports the belief that certain yoga techniques may improve physical fitness.]

**Introduction-**Yoga is an ancient discipline having a hoary past. The relics of Mohenjodaro excavations show its antiquity. The importance of Yoga for spiritual development has been recognised through the ages. The discipline of Yoga passed through several stages and in course of time different schools emerged and variety of techniques were evolved.

The word Yoga is derived from the Sanskrit root yuj meaning to bind the yoke. It is the true union of our will with the will of god. Our ancient sages have suggested eight stages of Yoga to secure purity of body, mind and soul and final communion with God. Yoga is often depicted metaphorically as a tree and comprises eight aspects, or limbs, yama (universal ethics), niyama (individual ethics), asana (physical postures), pranayama (breath control), pratyahara (control of the senses), dharana (concentration), dyana (meditation), Samadhi (bliss).

**What is Yoga:-**The word 'Yoga' is pregnant with lots of meanings. For astrologers and palmistrians it is the situation of stars, for Mathematicians it is used for adding two, three or more numbers. Literally the word Yoga means 'Union', the union of the finite with the infinite. This shows that Yoga has different meaning at different places.

**What is Physical Fitness:-** This is probably the most popular and frequently used term in physical education and to develop physical fitness is the most important objective of physical educators.The United States President's Council of Physical Fitness and Sports defined the terms-Physical fitness as "the ability to carry out daily tasks with vigour and alertness without undue fatigue, with ample energy to enjoy leisure time pursuits, and to meet unforeseen emergencies""Physical fitness" can mean several different things. Here are some examples:

- how someone has progressed through a personal training program;
- how well someone is able to perform certain standard gymnastic exercises;
- how suitable someone is for doing a certain task or job.

**The Components of Physical Fitness-**The five components of physical fitness are:

1.Cardiovascular endurance 2.Muscle strength 3.Muscle endurance4Flexibility5.Body composition

These 5 components measure your body's ability to use oxygen as fuel, your muscular strength and endurance, the flexibility of your joints and your total body fat. A range of tests are used to measure

these components. Once you've been tested in all five components, a physical fitness regimen can be tailored to your specific needs.

**Cardiovascular Endurance:-**Cardiovascular endurance refers to the ability of your heart and lungs to work together to fuel your body with oxygen. The Cooper Run is most often used to test cardiovascular endurance. Aerobic conditioning, like jogging, swimming and cycling, can help improve cardiovascular endurance.

**Yoga Exercise**:-anulom vilom, Kapalbhati,

**Muscle Strength:-**Muscle strength refers to the amount of force a muscle can exert, in a single effort. Exercises like the bench press, leg press or bicep curl might be used to measure muscle strength.

**Yoga Exercise**:- surya namaskara, pashchimottanasana, janushirasana, ardha matsyendrasana, purn matsyasana, dhanurasana, naukasana, chakrasana, halasana, konasana, shalabhasana, mayurasana, kukkutasana, bakasana, nauli, kapalabhati.

**Muscle Endurance:-** Muscle endurance refers to the ability of a muscle to perform a continuous effort without fatiguing. Cycling, step machines and sit up tests are often used to measure muscular endurance.

**Yoga Exercise**:- surya namaskara, pashchimottanasana, janushirasana, ardha matsyendrasana, purn matsyasana, dhanurasana, naukasana, chakrasana, halasana, konasana, shalabhasana, mayurasana, kukkutasana, bakasana, nauli, kapalabhati.

**Flexibility:-**Flexibility refers to the ability of each joint to express its full range of motion. Flexibility can be tested by stretching individual muscles or by performing exercises such as the lunge or the sit and reach.

**Yoga Exercise**:- pashchimottanasana, janushirasana, ardha matsyendrasana, dhanurasana, bhujangasana, chakrasana, halasana, konasana, surya namaskara.

**Body Composition:-**Body composition refers to the amount of body fat you have, versus the amount of lean muscles, bones and organs. There are several tests that can be used to measure body composition. The most reliable is underwater weighing, but due to the size and expense of the equipment, this type of test isn't common. Many doctors, gyms and health clubs use a pinch test instead.

**Yoga Exercise:** mandukasana, pashchimottanasana, mayurasana, sputa vajrasana, dhanurasana, ardha matsyendrasana, kapalbhati, vamana dhouti.

**Improving Individual Components:-** Once you've had your own 5 components of physical fitness measured, you can use this information to form a fitness regimen tailored to your needs. If you're weak in cardiovascular endurance, you'll need aerobic conditioning in the form of jogging, swimming, cycling or even sports. Strength training exercises can help improve muscular strength; a strength training exercise that uses low weight and high reps can help improve muscular endurance.Yoga and Pilates can help improve overall flexibility. Following good exercise practices

can also help; warm up and stretch before your workouts, then cool down and stretch after to keep your muscles from shortening. Flexibility often improves rapidly with practice.

## General Principles:

- All yoga exercise practices are psycho-physiological in nature, and all these individually or collectively help to attain the objectives of yoga.
- Yoga exercise practices have complementary relationship, and one practice is helpful for performance of another.
- Yoga exercise practices give better results if performed in a particular sequence.
- Performance of Yoga exercise practices should not lead to fatigue.
- All practices should be done in calm and quiet mood.

## Yoga Exercise Practical Hints:-

- Yoga exercise practices should begin with relaxation and or quiet sitting with closed eyes.
- All Asanas may be performed under the pattern of normal breathing unless it is necessary to change the normal pattern of breathing and resort to special mode under desirable circumstances. It is true that backward bendings are facilitated with simultaneous inspiration and forward bendings with simultaneous expiration. But in general it does not help the Asanas to be performed with ease and comfort.
- It is advantageous to direct the mind to different parts of the body where sensations are felt.
- Practice of Shavasana intermittently during the session of Yoga exercise practices is helpful.
- Yoga exercise practices should be performed on an empty or light stomach.
- Kriyas and Pranayama are better learnt first under proper guidance before they are practised on one's own.

## Facts to know about health and physical fitness:

- Health and fitness are not static. They are always changing. They follow the law of use and disuse.
- The type of health and physical fitness varies according to the age, sex and occupation.
- Health and fitness can be maintained only through carefully selected exercises.
- Selected exercise can be programme may vary from individual to individual.
- One should always know his limitations about important.
- It is not quantity but quality of the exercise that is important.
- Health and fitness primarily depend upon the condition of the spine and the working of the vital organs situated in the thoraco-abdominal cavity and not on the skeletal muscles.

**References**:-

1.Prakash Soni, Rashmi Soni (2008), Yoga for happy living:Vishva guru prakashan, Ratangarh, Mumbai(india)

2.Manohar L. Gharote(2007). Guidelines for yogic practices:The lonavla yoga institute, Lonavla,(India).

3.Iyengar BKS. Light on Yoga. 2nd ed.

4. Saper R, Eisenberg D, Davis R, Culpepper L, Phillips R. Prevalence and patterns of adult yoga use in the UnitedStates: Results of a national survey. Altern Ther Health Med 2004;10:44–48.

5. Sterling P. Principles of allostasis: Optimal design, predictive regulation, pathophysiology, and rational therapeutics. In:
Schulkin J, ed. Allostasis, Homeostasis, and the Costs of Physiological Adaptation. Cambridge: Cambridge University Press, 2004:17–64.

6. McEwen BS. Allostasis and allostatic load: Implications for neuropsychopharmacology. Neuropsychopharmacology 2000;
22:108–124.

7. West J, Otte C, Geher K, Johnson J, et al. Effects of Hatha yoga and African dance on perceived stress, affect, and salivary cortisol. Ann Behav Med 2004;28:114–118.

8. Michalsen A, Grossman P, Acil A, et al. Rapid stress reduction and anxiolysis among distressed women as a consequence
of a three month intensive yoga program. Med Sci Monit 2005;11:555–561.

9. Khatri D, Mathur KC, Gahlot S, et al. Effects of yoga and meditation on clinical and biochemical parameters of metabolic
syndrome. Diabetes Res Clin Pract 2007;78:e9–e10.

10. Gokal R, Shillito L. Positive impact of yoga and pranayam on obesity, hypertension, blood sugar, and cholesterol: A pilot
assessment. J Altern Complement Med 2007;13:1056–1057.

11. Selvamurthy W, Sridharan K, Ray US, et al. A new physiological approach to control essential hypertension. Indian J Physiol Pharmacol 1998;42:205–213.

12. Damodaran A, Malathi A, Patil N, et al. Therapeutic potential of yoga practices in modifying cardiovascular risk profile in middle aged men and women. J Assoc Physicians India 2002;50:633–639.

13. McCaffrey R, Ruknui P, Hatthakit U, Kasetsomboon P. The effects of yoga on hypertensive persons in Thailand. Holist Nurs Pract 2005;19:173–180.

14. Stuck M, Meyer K, Rigotti T, et al. Evaluation of a yogabased stress management training for teachers: Effects on immunoglobulin A secretion and subjective relaxation. J Medit Medit Res 2003;1–8.

15. Rao RM, Telles S, Nagendra HR, et al. Effects of yoga on natural killer cell counts in early breast cancer patients undergoing
conventional treatment. Comment to: recreational music-making modulates natural killer cell activity, cytokines, and mood states in corporate employees Masatada Wachi, Masahiro Koyama, Masanori Utsuyama, Barry B. Bittman, Masanobu Kitagawa, Katsuiku Hirokawa. Med Sci Monit 2007;13:CR57–CR70. Med Sci Mon 2008;14:3–4.

**Research scholar**

**S.R.T.M.University Nanded**